चन्दामामा
मार्च १९८४

पारले

मेलडी की पेशकश

रैपर के जादू में

परी नानी,
मेलडी टॉफियों के लिए
धन्यवाद.

जीती रहो, लाडली
पर हाँ, रैपर संभाल के रखना–
१० रैपरों के बदले
मुफ्त मिलेगा एक स्टिकर.

डिज़्नी-दोस्तों के मुफ्त स्टिकर।

आओ बच्चो! अभी से ही अपने चहेते डिज्नी दोस्तों को जमा करना शुरू कर दो. ये कुल मिला कर ३० हैं. हर स्टिकर के लिए तुम्हें बस मेलडी टॉफी के १० रैपरों के साथ अपना नाम-पता लिखा और ५५ पै. का डाकटिकिट लगा लिफाफा इस पते पर भेजना है·
मेलडी टॉफी, पारले प्रॉडक्ट्स प्रा. लि. निर्लोन हाऊस, २५४-बी, डॉ. एनी बेसेन्ट रोड, बम्बई ४०० ०२५

नई पारले

मेलडी टॉफी

कैरामेल और चॉकलेट का
मज़ेदार मधुर मेल.

डायमंड कामिक्स में

हंसा हंसा कर लोटपोट कर देने वाला कार्टूनिस्ट **प्राण** का जीवन्त चरित्र चाचा चौधरी का दिमाग कम्प्यूटर से भी तेज चलता है और बलशाली साबू जूपिटर का प्राणी है। चाचा चौधरी का दिमाग और साबू की शक्ति हमेशा दूसरों की भलाई के लिये ही प्रयोग की जाती है। उनके कारनामें मनोरंजन के साथ-साथ शिक्षाप्रद भी हैं।

चाचा चौधरी और साबू का नया कारनामा

चाचा चौधरी और क्रिकेट मैच

5-00

चाचा चौधरी सीरीज की अन्य उपलब्ध कामिक्स

चाचा चौधरी और रहस्यमय चोर	5-00
चाचा चौधरी और साबू का बूट	5-00
चाचा चौधरी और राका	5-00
चाचा चौधरी और साबू काले टापू पर	3-50
चाचा चौधरी और साबू पर हमला	3-50
चाचा चौधरी और शिकारी लकड़बग्घासिंह	3-50
चाचा चौधरी और कराटे सम्राट	3-50
चाचा चौधरी और बैंक के लुटेरे	3-50
चाचा चौधरी और बोतल का जिन्न	3-50
चाचा चौधरी की गब्बरसिंह से टक्कर	3-50
चाचा चौधरी और अकबरी खजाना	3-50
चाचा चौधरी और साबू का अपहरण	3-50
चाचा चौधरी अन्तरिक्ष में	3-50
चाचा चौधरी और आदमखोर	3-50

बच्चों की निराली अनूठी मनभावन पत्रिका अंकुर का नया अंक

अंकुर और चालाक चौकीदार

3-50

राजन इकबाल और आठ करोड़ का हीरा

3-50

मामा भांजा और भैंस की पूंछ

3-50

पलटू का दूसरा अंक

पलटू और नागराज से टक्कर

3-50

अंकुर बाल बुक क्लब

डायमंड कामिक्स की बच्चों के लिये नई निराली अनूठी योजना

अंकुर बाल बुक क्लब के सदस्य बनिये और हर माह घर बैठे, डायमण्ड कामिक्स, अंकुर व डायमण्ड बाल पाकेट बुक्स डाक व्यय फ्री की सुविधा के साथ घर बैठे प्राप्त करें।

डायमण्ड कामिक्स व अंकुर आज हर बच्चे की पहली पसन्द है। रंग बिरंगे चित्रों से भरपूर डायमण्ड कामिक्स व अंकुर हर बच्चा घर बैठे प्राप्त करना चाहता है इस इच्छा के सैकड़ों पत्र हमें प्रति दिन प्राप्त होते हैं। नन्हें मुन्नों की मांग को ध्यान में रखकर हमने यह उपयोगी योजना शुरू करने का कार्यक्रम बनाया है। आपसे अनुरोध है इस योजना के स्वयं सदस्य बनें और अपने मित्रों को भी बनने की प्रेरणा दें :—

सदस्य बनने के लिये आपको क्या करना होगा :—

1. संलग्न कूपन पर अपना नाम व पता भर कर हमें भेज दें। नाम व पता साफ-साफ लिखें ताकि पढ़ने में आसानी हो।
2. सदस्यता शुल्क दो रुपये मनीआर्डर या डाक टिकट द्वारा कूपन के साथ भेजें।

सदस्यता शुल्क प्राप्त होने पर ही सदस्य बनाया जायेगा।

3. हर माह पांच पुस्तकें एक साथ मंगाने पर 2/- की विशेष छूट व डाक व्यय फ्री की सुविधा दी जायेगी। हर माह हम पांच पुस्तकें निर्धारित करेंगे यदि आपको वह पुस्तकें पसन्द न हों तो डायमण्ड कामिक्स व डायमण्ड बाल पाकेट बुक्स की सूची में से कोई सी पांच पुस्तकें आप पसन्द करके मंगवा सकते हैं लेकिन कम से कम पांच पुस्तकें मंगवाना जरूरी है।

सदस्यता कूपन

मुझे 'अंकुर बाल बुक क्लब' का सदस्य बना लें। सदस्यता शुल्क दो रुपये मनीआर्डर/डाक टिकट से साथ भेजा जा रहा है। (सदस्यता शुल्क प्राप्त न होने की स्थिति में आपको सदस्यता नहीं दी जायेगी) मैंने नियमों को अच्छी तरह पढ़ लिया है। मैं हर माह वी० पी० छुड़ाने का संकल्प करता/करती हूं।

नाम ____________________
पिता का नाम ____________________
पता ____________________
डाकखाना ____________________
जिला ____________________

ऐसा ही लगभग 150 अन्य डायमंड कामिक्स प्रकाशित हो चुकी है। पत्र लिखकर सम्पूर्ण सूची पत्र निःशुल्क मंगाये।

अपने निकट के बुक स्टाल से खरीदें या हमें लिखें।

डायमंड कामिक्स प्रा. लि. 2715 दरिया गंज, नई दिल्ली-110002
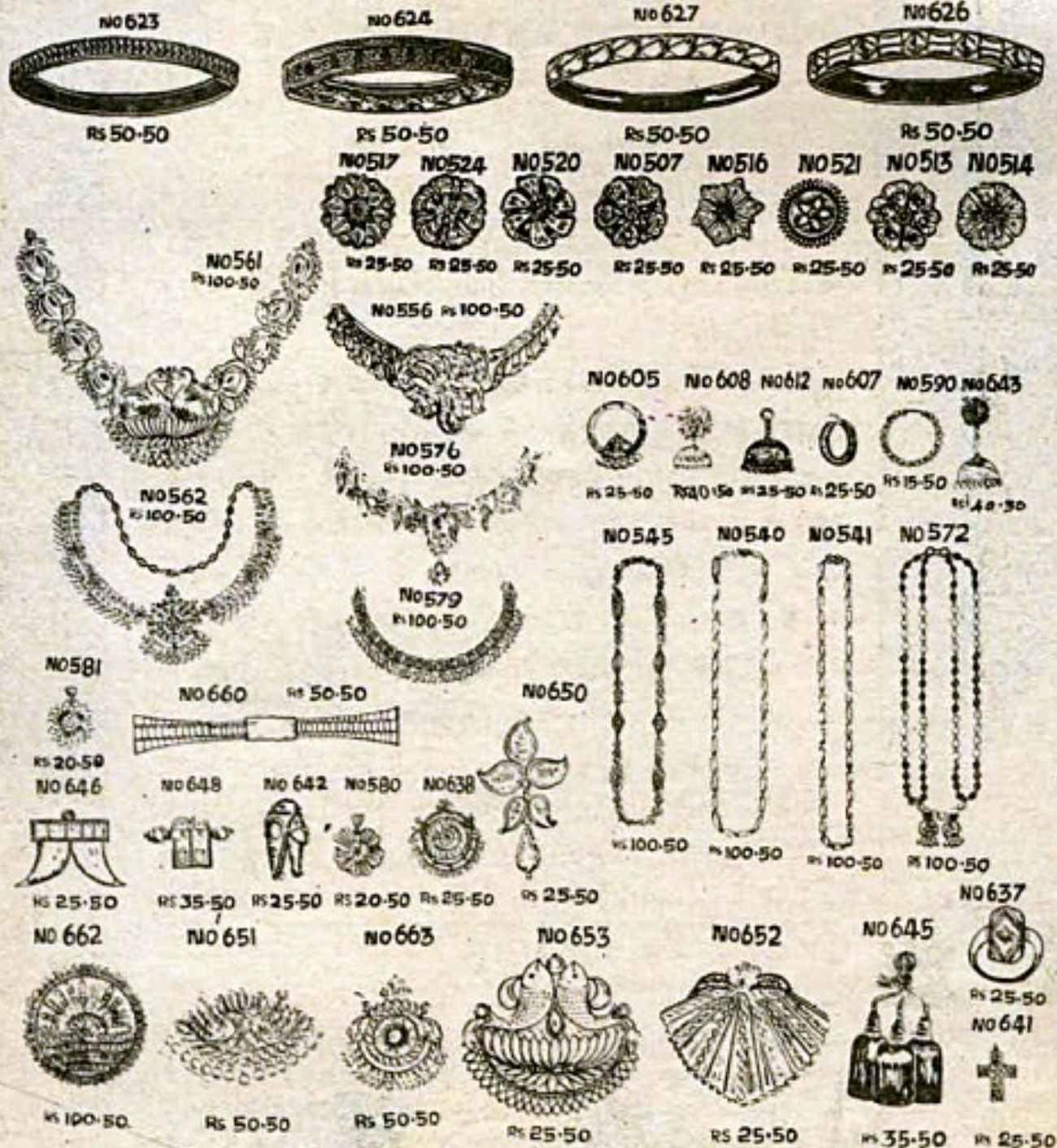
चन्दामामा

संस्थापक : 'चक्रपाणी'
संचालक : नागिरेड्डी

मनुष्य की पहचान उसके विचारों से होती है या कर्मों से—इस शंका का समाधान चाहते हैं तो वसुन्धरा की कहानी "मनुष्य और तोता" पर आधारित बेताल कथा पढ़ना न भूलिए। परोपकार करने वाले का व्यवहार कैसा हो—"सच्चा हितैषी" रघुनाथ अब समझ गया है, उसी से आप पूछ लें तो बेहतर है। लाख दुश्मन बुरा चाहे, लेकिन होता वही है जो मंजूरे खुदा होता है, बुराई का फल बुरा ही होता है—आदि अनेक नसीहतों से भरपूर है इस माह की अरब्य रजनी कहानी— "बदला।" आनन्द और शिक्षा के ताने-बाने से बुनी और भी अनेकानेक कथाएं !

अमर वाणी

न सा विद्या न तद्वित्तं, न सा शक्तिर्नत द्बलम् ।
यदि विद्या धने शक्ति, बलेन्योव कृतौ न चेत् ॥

[यदि हमारी विद्या, शक्ति और बल दूसरों के लिए उपयोगी सिद्ध नहीं होते तो वे सच्चे विद्या धन और शक्ति-बल नहीं कहला सकते।]

वर्षः ३६ मार्च १९८४ अंकः ७

एक प्रतिः २-०० :: वार्षिक चन्दाः २४-००

चन्दामामा विशेष संवाद

उड़नेवाले जानवर

टेक्सास में उपलब्ध अवशेषों के आधार पर ज्ञात हुआ है कि करोड़ों वर्ष पूर्व धरती पर रेंगनेवाले ऐसे विचित्र जानवरों का अस्तित्व था जो हवा में उड़ भी सकते थे। इनके पंखों की लम्बाई सोलह मीटर तक होती थी। इनका अस्तित्व लाखों वर्षों तक बना रहा।

अन्तरिक्ष की विनोद यात्रा

अमेरिका के 'नासा' तथा अन्तर्राष्ट्रीय रॉकवेल वैज्ञानिक संस्थान के वैज्ञानिक सम्मिलित रूप से एक ऐसे अन्तरिक्ष यान का निर्माण कर रहे हैं जो व्योम विश्रामकक्ष में एक साथ चौहत्तर लोगों को बैठा कर ले जा सकता है। आशा की जाती है कि इसका पहला दल १९९० के बाद अन्तरिक्ष की विनोद यात्रा पर निकलने वाला है। इस यात्रा के लिए प्रति व्यक्ति व्यय बीस लाख डालर होगा।

पारदर्शक सोना

न्यू मैक्सिको के लास अलमन नामक राष्ट्रीय अनुसंधान संस्थान के वैज्ञानिकों ने सोने की इतनी बारीक परत बनाई है कि उसके आर-पार देखा जा सके। उस परत की मोटाई एक इंच के दस लाखवें हिस्से से भी कम है।

क्या आप जानते हैं ?

१. कलकत्ता नगर का निर्माण कब और किसने किया ?
२. ईसाई धर्म के प्रति जिज्ञासा रखने वाला मुगल बादशाह कौन था ?
३. सिकन्दर के भारत आक्रमण का इतिहास लिखनेवाला इतिहासकार कौन था ?
४. उन्नीसवीं शताब्दी में भारत के आंशिक भूभाग पर अधिकार करने वाला विदेशी राजा कौन था ?
५. भारत में अंगरेज़ी शिक्षा का प्रारम्भ किसने किया ?

(उत्तर ६४ वें पृष्ठ पर देखें)

सच्चा हितैषी

अवधपुरी का निवासी रघुनाथ बड़ा ही उत्साही और परोपकारी युवक था। दूसरों के दुख-दर्द को वह अपना दुख-दर्द समझता और उनके सुख के लिए अपने प्राणों की बाज़ी लगा देने में भी नहीं हिचकता।

एक बार आँधी-तूफान में गाँव की कई झोंपड़ियाँ उड़ गई। बहुत से लोग बेघरबार हो गये। रघुनाथ ने जब उनकी यह दयनीय दशा देखी तो उसका हृदय रो उठा। उसके पास इतना साधन नहीं था कि अपने खर्च से सबकी झोंपड़ियाँ बनवा देता। इसलिए उसने दो-चार युवकों को अपने साथ ले घर-घर घूम कर चन्दा इकट्ठा किया और उस धन सें सब के लिए नई झोंपड़ियाँ बनवा दीं।

इस काम में गाँव के सभी साधन-सम्पन्न परिवारों ने यथाशक्ति सहायता दी। लेकिन सबसे धनसेठ धनीराम ने एक फूटी कौड़ी तक नहीं दी। रघुनाथ ने धनीराम को धन के सदुपयोग के बारे में बताते हुए यह भी कहा कि गाँव के किन-किन लोगों ने अधिक चन्दा दिया है। लेकिन उसकी बात सुने बिना धनीराम ने रघुनाथ को डपटते हुए कहा—

"तुम बेमतलब उन लोगों के लिए अपना गला फाड़-फाड़ कर क्यों दर्द मोल ले रहे हो? जिन लोगों की झोंपड़ियाँ उड़ गई हैं, क्या उन लोगों ने तुम्हारे सामने आकर हाथ पसारे? जानते हो, क्यों? क्योंकि कोई भी इज़्ज़तदार आदमी हाथ फैलाना नहीं चाहता। मैं जानता हूँ इसमें तुम्हारा कोई स्वार्थ है, तभी तुम दूसरों के नाम पर चन्दा माँगते फिर रहे हो। इसलिए मैं ऐसे काम में चन्दा-वन्दा नहीं देता।"

वैसे गाँव के सभी लोगों ने रघुनाथ की बहुत प्रशंसा की। कुछ लोगों ने तो उसे देवता-तुल्य भी कहा। लेकिन इससे उसे उतनी प्रसन्नता नहीं हुई जितना धनीराम के अपमान से दुख पहुँचा। इसलिए अपमान के बदले उसे

गीता अग्रवाल

नाम-ठिकाने के लोग ही दूसरों के पैसों से तारीफ़ खरीदते चलते हैं । भिखारी कहीं के ! काम-धाम नहीं है तो चले आये दूसरों का वक्त बर्बाद करने !" इस तरह रघुनाथ को अपमानित करके अपने घर से भगा दिया ।

रघुनाथ को क्रोध तो बहुत आया लेकिन खून का घूँट पीकर रह गया । जब उसके पिता को यह बात मालूम हुई तो उसने उसे समझाते हुए कहा— "बेटे ! जब दूसरों का उपकार करने चले हो तो लोगों की बातों की परवाह नहीं करनी चाहिये । यदि धनीराम की बात खटकती है तो उससे दूर रहा करो ।"

पिता की बात से उसे शान्ति नहीं मिली तो रघुनाथ ने धनीराम के प्रति अपने क्रोध को मित्रों के सामने प्रकट किया । उन्होंने भी यही समझाया— "तुम धनीराम की निरर्थक बातों को क्यों इतना तूल दे रहे हो ? किसी बेवकूफ़ के बकने से तुम नालायक़ और बेवकूफ़ तो नहीं हो जाओगे । सारा गाँव तुम्हारे बारे में क्या कहता है— वह अधिक महत्वपूर्ण है ।"

गाँव के बड़े-बूढ़े लोगों ने भी रघुनाथ को चौपाल पर बुला कर समझाया— "सभी जानते हैं कि धनीराम बिना सोचे-समझे कुछ भी कह देता हैं । इसलिए उसकी बातों की परवाह न करो । हम लोगों के समझाने का उस पर कोई असर न होगा, ।"

उसे इस बात से बहुत आश्चर्य हुआ कि किसी ने भी धनीराम की कड़ी निन्दा नहीं की । भी अपमानित करने का उसने निश्चय कर लिया । एक दिन रघुनाथ अपने दिल का गुब्बार निकालने फिर धनीराम के घर पहुँचा और बोला—

"शायद आप को मालूम नहीं है कि सारा गाँव इस नेक काम के लिए मेरी कितनी तारीफ़ कर रहा है ! यदि आप भी इस काम में हाथ बँटाते तो आप को कितना संतोष मिलता !"

इस बात को सुन कर धनीराम और भी जल-भुन गया और क्रोध में आकर बोला— "मेरे हाथ से न जाने कितने लोग रोज़ कर्ज़ लेने आते हैं और तारीफ़ के पुल बांध कर चले जाते हैं । मुझे तारीफ़ पाने के लिए तुम्हारी तरह भीख मांगने की ज़रूरत नहीं है । तुम्हारे जैसे बिना

सभी रघुनाथ को ही शान्त और सहनशील बनने के लिए सलाह दे रहे थे। उसने यह अनुभव किया कि धनीराम से उसकी सम्पत्ति के कारण सभी अच्छा सम्बन्ध रखना चाहते हैं। लेकिन रघुनाथ धनीराम से बदला लेने की ताक में लगा रहा। एक दिन उसके घर पर एक पहलवान आया और बोला— "मैं कुश्ती के अनेक दाँवपेंच जानता हूँ। यदि आप सब लोग मिल कर एक सौ सिक्कों का प्रबन्ध कर दें तब मैं मल्ल विद्या का प्रदर्शन कर गाँव वालों का मनोरंजन कर सकता हूँ।"

रघुनाथ को लगा कि धनीराम से बदला लेने का यह अच्छा अवसर है। वह बोला— "ऐसा काम तो मुझसे नहीं हो सकता। इस गाँव में एक धनसेठ हैं— धनीराम। वे पहलवानों और पहलवानों की कला में काफी रुचि रखते हैं। तुम उन्हीं के पास जाकर अपनी योजना समझाओ। वे तुम्हारी सहायता करेंगे।"

रघुनाथ ने सोचा कि धनीराम इसे भी अपमानित करेगा तो यह भी उसकी बातों से क्रोधित हो धनीराम का अपमान कर बैठेगा।

पहलवान धनीराम के घर पहुँचा और अपना परिचय देता हुआ बोला— "महाशय! मैंने सुना है कि आप मल्ल विद्या के बड़े प्रेमी हैं। मैं गाँव वालों के मनोरंजन के लिए अपनी विद्या का प्रदर्शन करना चाहता हूँ। क्या आप इस योजना के प्रबन्ध में मेरी सहायता कर सकते हैं?"

पहलवान की बातें सुनते ही धनीराम क्रोधित हो उठा और बोला— "जो लोग

अपना पेट भरने के लिए दूसरों पर निर्भर करते हैं— मुझे उनसे सख़्त चिढ़ है । मेरे पास ऐसे कामों के लिए समय नहीं है । तुम किसी और के पास जाओ ।" सेठ की बातों से पहलवान को क्रोध तो आया पर वह खून का घूंट पीकर रह गया । वह दाँत पीसता हुआ रघुनाथ के पास लौट आया और गरज कर बोला— "तुमने मुझे झूठ-मूठ क्यों बता दिया कि धनीराम मल्ल विद्या में रुचि रखता है । उसे तो इससे सख़्त नफ़रत है ! उसने मुझे बुरी तरह अपमानित किया है और यह सब तुम्हारे ही कारण मुझे सहना पड़ा है ।"

"उसने तुम्हारा अपमान किया और तुम चुपचाप सहते रहे ? क्या तुमने अपनी विद्या का प्रदर्शन उसके सामने नहीं किया ?" इस तरह धनीराम के विरुद्ध पहलवान को भड़काते हुए रघुनाथ ने कहा ।

"हाँ, हाँ, क्यों नहीं ? अपनी विद्या का प्रदर्शन अभी करता हूँ ।" यह कहते हुए पहलवान ने रघुनाथ पर ताबड़तोड़ कई मुक्कों का प्रहार किया । रघुनाथ दर्द से कराहता हुआ बोला— "उस दुष्ट ने तुझे अपमानित किया है और अपनी पहलवानी मुझ पर दिखा रहे हो ? मैंने तुम्हारा क्या बिगाड़ा है ?"

"तुम धनीराम से दुश्मनी रखते हो, इसीलिए मेरे हाथों से उसे पिटवाने के लिए तुमने यह चाल चली । इसीलिए मैंने धनीराम को नहीं, बल्कि तुम्हें पीटा है । धनीराम ने तेरे ही कारण मुझे अपमानित किया है ।" पहलवान यह कर चला गया ।

जब यह घटना रघुनाथ के पिता को मालूम हुई तो उन्हें बहुत दुख हुआ । उन्होंने रघुनाथ को फिर समझाते हुए कहा— "बेटा ! धनी राम बर्रे का छत्ता है । उसे छेड़ोगे तो डंक मारेगा ही । सच्चा हितैषी किसी के प्रति दुर्भाव नहीं रखता । वह परोपकार कर्त्तव्य समझ कर करता है, प्रशंसा पाने के लिए नहीं । वह निंदा और प्रशंसा से परे होता है ।" इसके बाद रघुनाथ ने कभी भी गाँव के किसी कल्याण-कार्य के लिए धनी राम से सहायता नहीं माँगी ।

१०

[जब भल्लूककेतु ने पिशाचों का नेता न बन कर पिंगल के साथ आने की इच्छा प्रकट की, तब पद्मपाद ने उसे भी अपने साथ आने दिया । पिंगल एक सप्ताह तक पद्मपाद के यहाँ अतिथि बन कर रहा, फिर भल्लूक केतु पर सवार हो अपने घर पहुँचा । अपने घर के सामने कंकाल जैसी बनी भूखी-प्यासी अपनी माँ को भीख माँगते देख वह बहुत दुखी हुआ ।.....इसके बाद]

पिंगल की आवाज़ पहचानते ही उसकी माँ उसके साथ लिपट गयी और रोती हुई बोली— "बेटा ! तुम इतने दिनों तक कहाँ रहे ? देख ! मेरी हालत क्या हो गई है ?"

पिंगल ने अपनी माँ को धीरज बंधाते हुए पूछा— "तुम्हारी यह हालत कैसे हो गई माँ ! मैंने चलते समय तुम्हें एक हज़ार अशर्फ़ियाँ दी थीं । क्या वह सारा धन खर्च हो गया ? और भाई क्या खा गये ?"

उसकी माँ संकोचवश कुछ बोल न सकी और थोड़ी देर तक चुपचाप रही । फिर बच्चों की तरह रोती हुई बोली— "तुम्हारे बड़े भाइयों ने ही मेरा यह हाल बना रखा है रे । तुम्हारे जाते ही उन दोनों ने मुझे मार-पीट कर सारी अशर्फ़ियाँ छीन लीं ।"

पिंगल को अपनी माँ की बातें सुन कर आश्चर्य और दुख दोनों हुआ । वह सोचने लगा— "ऐसे दुष्ट लोग भी होते हैं जो जन्म

क़ीमती हीरे-जवाहरात आदि रत्न दिखाये ।

माँ इतना सारा धन देख कर आनन्द से उछल पड़ी । उसने दोनों हाथों से उन रत्नों को छू कर कहा— "बेटा ! तुम बड़े भाग्यवान हो ! ईश्वर की तुम पर बड़ी कृपा है । इसीलिए सभी खतरों से बच कर तुम सही सलामत वापस आ गये । मैं अभी भूख से तड़प रही हूँ । जल्दी से मेरे लिए बाजार जाकर कुछ खाना ले आओ ।"

"तुम्हारे खाने का प्रबन्ध अभी यहीं करता हूँ माँ !" पिंगल ने मुस्कुराते हुए कहा । फिर उसने माँ को दीवार से सटे एक पीढ़े पर बिठाया और उसके सामने पत्तल बिछा दिया । इसके बाद उसने जादू की थैली निकाली और उसे माँ को दिखाते हुए पूछा— "बोलो माँ ! किस प्रकार का और कितने प्रकार का खाना चाहिये ? न केवल रोटी, शाक, सब्जी बल्कि तरह-तरह के पकवान और मिष्टान्न भी खा सकती हो ।"

यह सुन कर माँ अधीर हो कर बोली— "मैं भूख से मरी जा रही हूँ । मुझे अभी पकवानों की क्या ज़रूरत है ? मेरे लिए तो जल्दी से दो रूखी रोटियाँ ही ला दो ।"

पिंगल ने जल्दी से थैली में हाथ डाल कर कुछ मंत्र का उच्चारण किया और गरम-गरम रोटियाँ बाहर निकालीं । पिंगल की माँ यह देख कर अवाक् रह गई । पिंगल ने थैली में से तरह-तरह के स्वादिष्ट पकवान और मिष्टान्न भी

देनेवाली माँ को कष्ट देने में संकोच नहीं करते । लेकिन, फिर भी अपने भाइयों की हत्या करने में अधर्म ही होगा ।"

इसके बाद उसने हाथ का सहारा देकर अपनी दुर्बल माँ को उठाया और उसे घर के अन्दर ले जाकर आराम से बिठाते हुए कहा— "माँ ! अब तुम्हें किसी प्रकार का कष्ट न होगा । अब तुम्हारे हर प्रकार के आराम का प्रबन्ध कर दूँगा । ईश्वर की कृपा से हमें रास्ते की सभी बाधाओं को जीतने में सफलता मिली और ढेर सारी धन-दौलत के साथ घर सुरक्षित वापस आ गया हूँ । अब हम दोनों के बुरे दिन खत्म हो गये और अच्छे दिन आ गये हैं ।"

यह कह कर उसने थैले से निकाल कर

निकाले और माँ के पत्तल पर उन्हें सजा कर रख दिया ।

माँ यह सब देख कर खुशी से पागल हो गई और आँखें फाड़-फाड़ कर उनकी ओर देखती हुई बोली— "तुमने इस छोटी-सी थैली में इतना सारा सामान रखा कैसे ? अथवा यह कोई जादू-टोना या मंत्र-तंत्र तो नहीं है !"

"यह सब किस्सा बाद में सुनाऊँगा, पहले तुम इच्छा भर खाना खा लो माँ !" पिंगल ने थैली को तह करके अपने बगल में रखते हुए कहा ।

पिंगल ने भी माँ के साथ भर पेट खाना खाया और खाली थालियों को थैली में रख कर उसे संभाल कर रखने के लिए माँ को देते हुए कहा— "माँ ! आज से तुम्हें खाना पकाने की कोई ज़रूरत नहीं है । यह जादू की थैली हमें इच्छानुसार हर तरह का भोजन व पकवान दे सकती है । बस ! थैली में हाथ डाल कर एक मंत्र पढ़ना होता है । लेकिन यह रहस्य भूल से भी किसी पर प्रकट न करना ।" यह कह कर पिंगल ने अपनी माँ के कान में मंत्र पढ़ कर सुनाया । पिंगल की करामात देख कर माँ हैरान थी । उसे लग रहा था जैसे वह सपना देख रही हो । कितने दिनों से वह भूखी तड़प रही थी-दाने-दाने के लिए तरस रही थी ! बड़े बेटों ने मेरा क्या हाल बना दिया था ! एक-दो दिन पिंगल न आता तो मेरा दम ही टूट जाता ।

कितने वर्षों के बाद आज उसने इतना स्वादिष्ट भोजन पेट भर कर खाया था । वह मन ही मन पिंगल को लाख-लाख दुआएं दे रही थी ।

थैली का करिश्मा देख तो वह खुशी और हैरानगी से पागल हुई जा रही थी । "कितना पुण्य किया होगा मैंने कि पिंगल जैसा लाल मिला मुझे ।" वह फिर पिंगल की मन ही मन तारीफ़ करने लगी । "लेकिन उसे इन दिनों पता नहीं कैसी-कैसी तकलीफ़ें झेलनी पड़ी होंगी, कितनी बार मौत के मुँह से गुजरना पड़ा होगा, यह तो वही जानता है ।"

यह सब याद आते ही उसने कहा— "पिंगल ! तुमने सुनाया नहीं बेटे कि घर छोड़ने पर तुम पर क्या बीती, कैसे-कैसे ख़तरों का

सामना करना पड़ा ?"

"छोड़ो भी माँ ! वह सब सुन कर क्या करोगी ! बस इतना ही काफी है कि तुम्हारी दुआ से और ईश्वर की कृपा से सही सलामत आ गया, वरना कोई उम्मीद नहीं थी। वहाँ ऐसे-ऐसे मायावी भूत-पिशाच मिले जो सैकड़ों हजारों मनुष्यों को एक साथ चबा जायें। लेकिन मेरा मांत्रिक दोस्त भी कम नहीं है। बस उसी की बदौलत आज मैं कुछ हूँ—नहीं तो मैं मामूली मछुआरे के अलावा और क्या हूँ।"

माँ-बेटे में यह सब बात हो ही रही थी कि....

तभी दरवाज़े पर ज़ोर-ज़ोर से, सिर पीट कर रोने की आवाज़ सुन कर पिंगल चौंक पड़ा। पिंगल ने दौड़ कर दरवाज़ा खोला। वहाँ उसके दोनों भाई जीवदत्त और लक्षदत्त मैले कुचैले चिथड़ों और बिखरे बालों में दहाड़ मार कर रो रहे थे।

अपने बड़े भाइयों को इस दशा में देख कर उसका भ्रातृ-प्रेम उमड़ पड़ा। उसने उन्हें धीरज देते हुए कहा— "भाइयो ! मैं ईश्वर की कृपा से बहुत सारा धन कमा कर सकुशल लौट आया हूँ। अब हम सब बड़े आराम से अपना जीवन बिता सकते हैं।"

पिंगल की ये बातें सुन कर जीवदत्त और लक्षदत्त ने एक दूसरे की ओर बड़े अर्थपूर्ण दृष्टि से देखा। फिर जीवदत्त सिर पीटते हुए बोला— "प्यारे भाई पिंगल ! हमारा जीवन अब व्यर्थ है। अब हम ज़िन्दा रहना नहीं चाहते। माँ ने तुम्हें बताया ही होगा कि हम

दोनों ने उनके साथ कैसा दुर्व्यवहार किया है। अब हम किस मुँह से इस घर में क़दम रख सकते हैं ? आज तक हम तुम्हारा ही इन्तज़ार कर रहे थे। अब हम शुक सरोवर में डूब मरेंगे, तभी हमारे पापों का प्रायश्चित होगा। हम माँ को अब यह चेहरा दिखाना नहीं चाहते। उन्हें मेरा सौ-सौ प्रणाम कहना और तुम मेरे अपराधों को क्षमा कर देना। अब हमें विदा दो।" यह कह कर वह पीछे मुड़ा और वापस जाने लगा। उसके पीछे-पीछे लक्षदत्त भी चलने लगा।

पिंगल ने भाग कर अपने भाइयों का रास्ता रोका और कहा— "रुक जाओ भाइयो ! जो हो गया सो भूल जाओ। आप दोनों को अब कहीं जाने की आवश्यकता नहीं है। अब हम सब एक साथ रहेंगे और नये सिरे से ज़िन्दगी शुरू करेंगे।"

यह सुन कर वे दोनों और भी ज़ोर-ज़ोर से रोने-चिल्लाने लगे और कहने लगे— "रास्ते से हट जाओ पिंगल ! हमारे जैसे पापियों का डूब कर मरने में ही कल्याण होगा। हमें रोको नहीं, जाने दो।" इतना कह कर वे दोनों आगे बढ़ने लगे।

इतने में ही माँ भी दरवाज़े पर पहुँच गई। अपने बड़े बेटों को रोते-पछताते देख कर उसकी ममता उमड़ पड़ी और उनके दुर्व्यवहारों को भूल गई। वह वात्सल्य से उन्हें पुचकारती हुई बोली— "रो मत बेटे ! जो हो गया सो भूल जाओ। भगवान की दया से तुम्हारा छोटा भाई कमा कर काफी धन-दौलत लाया है।

किसी बात की चिंता न करो और साथ रह कर सुखपूर्वक जीवन बिताओ ।"

"फिर हम अपने पापों का प्रायश्चित कैसे करें ?" दोनों बड़े भाइयों ने एक स्वर से पूछा ।

"पश्चाताप ही सच्चा प्रायश्चित है । आप लोग अपनी भूल समझ रहे हैं, यही प्रायश्चित है । चलिये, अब घर चलिये ।" पिंगल ने उन दोनों के हाथ पकड़ कर घर की ओर चलने का संकेत करते हुए कहा ।

माँ ने भी कहा— "हाँ हाँ बेटे, आ जाओ । तुमने जो कुछ अज्ञानवश किया है, मैंने उसे माफ़ कर दिया है, क्यों कि मैं तुम्हारी माँ हूँ और तुम लोग आज भी मेरे सामने अबोध बच्चे ही हो ।"

इसके बाद दोनों बड़े भाई अनिच्छा दिखाते हुए घर के अन्दर आ गये ।

माँ ने तत्काल उन दोनों को पिंगल द्वारा लाये रेशमी वस्त्र देते हुए कहा— "लो नहा कर ये कपड़े बदल लो ।" दोनों ने प्रसन्न होकर स्नान किया और सुन्दर क़ीमती रेशमी वस्त्र धारण किये । फिर पिंगल और माँ की भूरि-भूरि प्रशंसा करते हुए उन दोनों भाइयों ने इनका प्यार से आलिंगन किया । फिर पेट पर हाथ फेरते हुए बोले— "अब तो बड़ी भूख लग रही है । कई दिनों से ठीक से भोजन नहीं मिला है । क्या घर में कुछ खाने के लिए होगा ?"

"अभी खाने का इन्तज़ाम करता हूँ ।" यह कहते हुए पिंगल जादू की थैली लेकर रसोई घर में गया और माँ को उसे देकर वापस आ गया ।

चन्द मिनटों में ही ताज़ा और स्वादिष्ट भोजन के साथ दो थालियाँ लिये माँ आ गई ।

इतना अच्छा भोजन देख कर दोनों भाई के मुँह में पानी आ गया । वे भोजन पर ऐसे टूटे जैसे उन्हें वर्षों से खाना नसीब न हुआ हो । खाते-खाते एक ने दिखाने के लिए कहा— "इतना सारा खाना पकाने की क्या ज़रूरत थी माँ ! हम कोई मेहमान तो नहीं हैं !"

ऐसा स्वादिष्ट भोजन तो हमने कभी चखा ही नहीं है ।" दूसरे ने आश्चर्य से कहा ।

इस पर पिंगल मुस्कुराता हुआ बोला— "हम लोग अब हर रोज़ ऐसा ही भोजन कर

सकते हैं। यदि चाहें तो ऐसा ही क़ीमती भोजन हम नगर के गरीबों को भी खिला सकते हैं।''

यह सुन कर दोनों भाइयों को बहुत आश्चर्य हुआ, लेकिन प्रकट रूप से वे कुछ न बोले। केवल अर्थपूर्ण नज़र से एक दूसरे को फिर एक बार देखा।

उस दिन रात के भोजन के बाद जीवदत्त और लक्षदत्त ठंढी हवा में टहलने के बहाने घर से बाहर निकल पड़े। दोनों को पता चला था कि पिंगल अपने साथ बहुत धन लाया है। अब वे इस धुन में थे कि उसका सारा धन कैसे हड़प लिया जाये।

''इस काम में अभी थोड़ा समय लगेगा। माँ और पिंगल दोनों को यह विश्वास हो गया है कि हम लोग सचमुच अपनी करनी पर पछता रहे हैं। फिर भी धैर्य से काम लेना होगा।'' एक भाई ने कहा।

तभी दूसरा भाई उसे डाँटता हुआ बोला— ''अरे मूर्ख! धन तो हम लोग किसी न किसी तरह हड़प ही लेंगे। लेकिन इससे भी अधिक रहस्य से भरा है भोजन! क्या तुमने इस ओर भी ध्यान दिया है? माँ ने चूल्हा-चौकी तो किया नहीं और एक से एक भोजन तैयार! आखिर यह हुआ कैसे?''

थोड़ी देर तक कुछ सोच कर लक्षदत्त फिर बोला— ''मुझे तो ऐसा लगता है कि पिंगल कुछ मंत्र-तंत्र सीख कर आया है। तभी उसने बड़े भरोसे के साथ कहा था कि नगर के सभी

कंगालों को भी ऐसा ही भोजन दे सकते हैं।''

''क्यों नहीं हम मौक़ा देख कर माँ से पूछ लें। वह अवश्य ही रहस्य खोल देगी।'' जीवदत्त ने सलाह दी।

दूसरे दिन जब पिंगल घर से बाहर गया तब दोनों भाई माँ के चरणों में बैठ कर बातों ही बातों में भोजन का रहस्य पूछ बैठे। बहुत देर तक माँ ने थैली का रहस्य छिपाने का प्रयत्न किया। लेकिन जब ये दोनों हाथ जोड़ कर गिड़गिड़ाने लगे तो माँ से न रहा गया। वह थैली दिखाती हुई बोली— ''इस थैली से जैसा खाना चाहो, माँग लो। लेकिन इस रहस्य को किसी पर प्रकट न करना।''

तभी इस सचाई की जाँच के लिए जीवदत्त

ने बच्चों की तरह हठ करते हुए कहा— "माँ ! मुझे भी यह जादू करना सीखा दो। मैं इसी समय जलेबी खाना चाहता हूँ।"

माँ प्यारवश न सिर्फ़ उनके दुर्व्यवहार भूल गयी बल्कि यह भी भूल गई कि इन्हें यह रहस्य बताने से पिंगल को हानि पहुँच सकती है।

उसने उन दोनों बेटों को मंत्र सिखा दिया और उनन दोनों ने बारी-बारी से मंत्र का प्रयोग कर थैली से तरह-तरह के पकवान और मिष्टान्न खाये।

थैली की करामात देख कर जीवदत्त और लक्षदत्त दोनों बड़े प्रसन्न हुए और मन ही मन उसे हड़पने की चाल सोचने लगे।

उसी रात उन दोनों ने मिल कर पिंगल और माँ के विरुद्ध एक कुचक्र रचा।

पहले उन दोनों ने मिल कर यह विचार किया कि किसी प्रकार पिंगल को घर से बाहर भेज दिया जाये। फिर माँ से सारा धन और जादू की थैली हड़प ली जाये। माँ इनका कुछ भी नहीं बिगाड़ सकती।

पिंगल को घर से बाहर भेजने के लिए एक सुझाव देते हुए जीवदत्त ने कहा— "मैं परसों जब बाज़ार से गुजर रहा था तो मुझे एक नाविक मिला। उसे कुछ युवक नाविकों की आवश्यकता है। इसलिए वह मुँहमाँगा धन देकर कुछ युवक नाविकों को खरीदना चाहता है। क्यों नहीं हम पिंगल को उस नाविक के हाथ बेच दें ! हम उसके बड़े भाई और घर के मालिक भी तो हैं !"

सुझाव की तारीफ़ करते हुए लक्षदत्त ने अपनी सहमति प्रकट की और कहा— "चलो, नाविक से मिल कर अभी बात कर लेंगे।"

इसके बाद वे तुरन्त ही नाविक के घर पर पहुँचे। जीवदत्त ने घड़ियाल के आँसू बहाते हुए कहा— "महानाविक ! मेरा छोटा भाई पिंगल बहुत उद्दण्ड और दुष्ट है। वह हम दोनों और बूढ़ी माँ को बहुत परेशान करता रहता है और घर से धन ले जाकर फ़िज़ूल खर्ची किया करता है। हमें कुछ समझ में नहीं आ रहा है कि इस दुष्ट भाई के अत्याचार से कैसे बचें ?"

(— क्रमशः)

मनुष्य और तोता

उस आधी रात में रह-रह कर कौंधती हुई बिजली और बादलों की गड़गड़ाहट ने श्मशान को मौत से भी अधिक खूंखार बना दिया था। लेकिन साहस का धनी और धुन का पक्का विक्रम बिना इसकी परवाह किये पेड़ के पास पुनः लौट आया। उसने पेड़ पर से पुनः शव उतारा और चुपचाप श्मशान की ओर चल पड़ा।

तभी शव-स्थित बेताल ने कहा—

"राजन! आधी रात के समय इस भयावह श्मशान में आप जो अथक परिश्रम और कष्ट उठा रहे हैं, उसे देख मुझे आप पर दया आ रही है। आप जो भी कार्य साधने में लगे हों, यह मैं नहीं जानता लेकिन उस कार्य के पीछे जो आप का दृढ़ संकल्प और सतत प्रयास है, वह सचमुच प्रशंसा और अनुकरण के योग्य है। लेकिन क्या यह सब आप अपने लिए कर रहे हैं या दूसरों के लिए? यही सन्देह मुझे बेचैन बना

बेताल कथा

रहा है। यदि आप यह सब दूसरों के लिए कर रहे हैं तो हो सकता है कि आप को पछताना पड़े, क्यों कि कभी-कभी उन्हीं लोगों के द्वारा जिनके लिए इतना कष्ट उठा रहे हैं, सम्मानित होने के बदले उल्टा अपमानित होना पड़ता है। उदाहरण के लिए मनुष्य और तोते की कहानी सुनाता हूँ।

धारा नगर का निवासी सुदर्शन अतुल सम्पत्ति का स्वामी था। उसकी पत्नी सुन्दर और सुशील थी तथा बच्चे भी सर्वगुण सम्पन्न थे। उसके जीवन में हर तरह का सुख और आराम था, फिर भी वह सदा चिंतित रहा करता था। उसके मित्रों और अन्य शुभ चिंतकों ने उसे प्रसन्न रखने के बहुत प्रयास किये, फिर भी उसका मन खिन्न और बेचैन ही रहता।

एक दिन सुदर्शन के पास एक व्यक्ति पिंजड़े में बन्द एक सुन्दर तोता लेकर आया और बोला— "महानुभाव! यह एक बुद्धिमान मनुष्य की तरह सोचने और बोलने वाला अद्भुत तोता है। यह ज्ञान वर्द्धक और शिक्षाप्रद कहानियाँ सुनाकर आप का मनोरंजन कर सकता है। यदि आप एक हज़ार सिक्के दें तो इसे मैं आप के हाथ बेच सकता हूँ।"

सुदर्शन ने तोते की जाँच-परख तथा उससे बातचीत करके देखा। उसकी बातचीत से उसे बड़ी शान्ति मिली। उसने झट एक हज़ार सिक्के देकर तोते को खरीद लिया।

कुछ ही दिनों में तोता सारे परिवार का प्रिय पात्र बन गया। सुदर्शन का तो सारा दिन तोते के साथ ही गुज़रने लगा। उसने व्यापार में रुचि कम कर दी और उसका सारा भार बेटों पर छोड़ दिया। पत्नी के साथ भी बोलना तथा उठना-बैठना बहुत कम हो गया। इस कारण परिवार के सभी सदस्य तोते से ईर्ष्या करने लगे।

कई लोगों ने सुदर्शन को समझाया कि तोते के कारण परिवार और व्यापार को इस तरह छोड़ना ठीक नहीं है, किन्तु उनकी बातों को सुदर्शन यह कह कर टाल देता— "तोते के पास रहने से तथा इससे बातचीत करने से मेरे मन को बड़ी शान्ति मिलती है। यही कारण है

कि मैं अधिक से अधिक समय तोते के साथ बिताना चाहता हूँ ।"

एक दिन सुदर्शन के बेटे ने प्रश्न किया— "पिता जी ! यदि यह तोता इतना ही बुद्धिमान है तो क्यों नहीं आप की मानसिक पीड़ा को सदा के लिए दूर कर देता ?"

सुदर्शन को बेटे की यह बात जँच गयी । इसलिए उसने तोते से अपनी मानसिक अशान्ति का उपाय पूछा ।

"पिंजड़े में रहने वाले लोग दूसरों की चिन्ता तो दूर कर सकते हैं पर अपनी नहीं । यदि आप सिर्फ़ अपने लिए नहीं, बल्कि दूसरों के लिए भी जीने की आदत डाल लें तो स्वार्थ रूपी पिंजड़े से मुक्त होकर इस अशान्ति से भी मुक्त हो सकते हैं ।" तोते ने समझाते हुए कहा ।

उस दिन से सुदर्शन परोपकार की ओर अधिक ध्यान देने लगा और दूसरों के दुख दर्द को दूर करने में हर तरह से सहायता पहुँचाने लगा । इससे लोगों में उसकी काफी प्रशंसा होने लगी । सुदर्शन के मन पर भी इसका अच्छा प्रभाव पड़ा । उसकी मानसिक अशान्ति दूर हो गयी और वह प्रसन्न रहने लगा ।

दूसरों की सहायता करने में सुदर्शन का काफी धन खर्च होने लगा । पिता की यह दानशीलता बेटों को अच्छी न लगी । तोते ने ही परोपकार की भावना सुदर्शन के मन में भरी थी, इसलिए उनके एक बेटे ने एक दिन कहा—

"पिता जी ! तोता मनुष्य की भाँति बोलता ज़रूर है लेकिन वह उतना ही बोलता है जितना उसे रटवाया जाता है । मनुष्य की तरह सोचना और ज्ञान की बातें करना तोते के लिए स्वाभाविक नहीं है । इसलिए हमारा तो सन्देह यह है कि यह कोई जादू-टोने का तोता है । और आप की सारी सम्पति को दान के रूप में प्राप्त करने के लिए ही किसी ने यह तोता आप के पास भेजा है । अतः मेरा तो यह विचार है कि इस तोते को रखना हम लोगों के लिए हितकर नहीं है ।"

अपने बेटे के इस सन्देह का सुदर्शन कोई उत्तर न दे सका । इस सन्देह को दूर करने के लिए उसने तोते से ही प्रश्न किया— "साधारणतः पक्षी मनुष्य की भाँति सोच-विचार

नहीं सकते, लेकिन तुममें यह शक्ति कैसे आई ?''

तोते ने कहा— ''एक बार राजा विक्रमादित्य को कुछ दिनों के लिए तोते की योनि में रहना पड़ा । उस समय उन्होंने एक तोती से विवाह कर लिया । मैं उन्हीं के वंश का तोता हूँ, इसीलिए मनुष्यों की तरह सोचना और बोलना मुझे सहज रूप से प्राप्त है ।''

तोते का यह उत्तर सुदर्शन को उचित और सत्य जान पड़ा लेकिन उसके बेटे को इस पर विश्वास नहीं हुआ । सुदर्शन तोते से इतना प्रभावित था कि उसे हर तरह से प्रसन्न रखने की कोशिश करता । लेकिन तोता फिर भी सन्तुष्ट नहीं था, वह बराबर यही कहता— ''इस पिंजड़े से मुक्त होने पर ही मुझे सच्चा आनन्द मिलेगा ।'' लेकिन सुदर्शन अपनी मरज़ी से तोते से अलग होना नहीं चाहता था ।

एक बार ग़लती से पिंजड़े का द्वार खुला रह गया । फिर भी तोता उड़ा नहीं ।

सुदर्शन को इस बात पर बहुत आश्चर्य हुआ । उसने तोते से पूछा— ''तुम मुक्त होकर स्वेच्छा पूर्वक जीना चाहते हो, लेकिन जब इसके लिए मौक़ा मिला, तुमने इसका उपयोग नहीं किया । ऐसा क्यों ?''

तोते ने इसे स्पष्ट करते हुए उत्तर दिया— ''मैं विक्रम वंश का पक्षी हूँ । मैं कोई अधर्म का कार्य नहीं करना चाहता । आपने मुझे एक हज़ार सिक्के देकर खरीदा है, इसलिए मुझ पर आप का अधिकार है । जब तक आप स्नेह से मुझे विदा न करें, मैं इस तरह छिप कर जाना अधर्म समझता हूँ ।''

उस दिन से सुदर्शन पिंजड़े को बन्द करने पर विशेष ध्यान नहीं देता । तोते ने सुदर्शन की असावधानी देख कर उसे समझाया— ''पिंजड़े का द्वार हर रोज़ बन्द किया करें । द्वार खुला रहने से मेरा मन दुर्बल हो सकता है और मैं किसी दिन भाग भी सकता हूँ ।''

''यदि तुम भागना ही चाहते हो तो इस बात की चेतावनी मुझे क्यों देते हो ?'' सुदर्शन ने फिर अपना सन्देह प्रकट किया ।

''वैसे बहुत लोग अनुचित कार्य करना नहीं

चाहते किन्तु मौक़ा मिलने पर उनसे अनुचित कार्य हो जाता है। मैं विक्रम वंश का अवश्य हूँ लेकिन विक्रमादित्य जैसा महान और दृढ़ संकल्प का तो नहीं हूँ। यदि संकल्प दृढ़ न हो तो ऊँचे विचार वाला व्यक्ति भी लालच में पड़कर पतित हो सकता है। इसीलिए मैं आप से निवेदन कर रहा हूँ कि पिंजड़े के द्वार को खुला रख कर मुझे अधर्म करने का अवसर न दीजिए।" तोते ने कहा।

सुदर्शन ने तोते के ज्ञान और चरित्र की प्रशंसा करते हुए यह बात अपनी पत्नी और बच्चों को भी बतायी। यह सुन कर वे बोले— "ऐसा तोता बहुत अशुभ होता है। इससे पूरे परिवार की हानि हो सकती है।"

इसके एक सप्ताह के बाद ही सुदर्शन अचानक बीमार पड़ गया। इससे तोते के प्रति इसके मन में भी सन्देह पैदा हो गया। सुदर्शन ने हर तरह की दवा खाकर देखा लेकिन कोई लाभ न हुआ। एक दिन वैद्य ने सुदर्शन के रोग की जाँच-पड़ताल कर के कहा— "आप के रोग के लक्षणों को देखने पर आयुर्वेद शास्त्र के अनुसार इसकी एक ही औषधि मिलती है—राजगंधी की बूटी। इसकी जानकारी यहाँ किसी को नहीं है।"

"यदि मैं स्वतंत्र हो जाऊँ तो यह जड़ी ढूंढ कर ला सकता हूँ।" तोते ने कहा।

सुदर्शन ने कहा— "मैं तो पहले से ही रोग से चिन्तित हूँ। यदि ऐसी हालत में तुम भी मेरे साथ न रहे तो मेरा जीना कठिन हो जायेगा।"

सुदर्शन की पत्नी और बच्चों को तोते को भगाने का अच्छा अवसर मिल गया। उन्होंने औषधि लाने के लिए तोते को पिंजड़े से बाहर निकाल कर उड़ा दिया और यह समझा कि बला टल गई। लेकिन तोते ने सुदर्शन को धोखा नहीं दिया। दूसरे दिन ही वह अपनी चोंच में राजगन्धी की बूटी दबाये लौट आया।

उस दवा के प्रयोग से कुछ ही दिनों में सुदर्शन पूर्ण रूप से स्वस्थ हो गया। इस उपकार के लिए तोते के प्रति कृतज्ञता प्रकट करते हुए सुदर्शन ने कहा— "मैं तुम्हारी ही वजह से रोग मुक्त हो सका हूँ। तुमने मेरे लिए दुर्लभ औषधि लाकर मेरे ऊपर बहुत बड़ा एहसान किया है।

इसलिए यदि तुम चाहो तो मैं तुम्हें मुक्त कर सकता हूँ। लेकिन फिर भी यदि तुम यहीं रहना चाहो तो मुझे बड़ी खुशी होगी ।''

"मैंने अपने परिवार वालों और सम्बन्धियों से अलग होते समय उनसे शीघ्र ही मिलने का वचन दिया था। लेकिन आपने मेरे बदले हज़ार सिक्के दिये थे इसलिए मैं मुक्त होना नहीं चाहता था। अब आप के लिए कुछ करके आप के ऋण से मुक्त अनुभव करता हूँ । आप भी अपनी इच्छा से मुझे मुक्ति दे रहे हैं, इसके लिए मैं आप का हृदय से आभारी हूँ।'' इतना कह कर तोता पिंजड़े से उड़ गया ।

तोते के जाने के बाद सदर्शन चिंतित-सा रहने लगा। इस पर उसकी पत्नी ने उसे समझाते हुए कहा— "वह तो जादू-टोने का तोता था। उसके लिए चिंता करने से आप की तबीयत फिर खराब हो जायेगी ।''

पंडितों ने भी सुदर्शन को यही सलाह दी। लेकिन फिर भी उसे.तोते का अभाव उसे बराबर खटकता रहा ।

कुछ ही दिनों के बाद एक दिन तोता अचानक वापस आ गया। उसने सुदर्शन से कहा— "मैं बहुत कोशिश के बावजूद अपने परिवार और सम्बन्धियों में खप न सका। मैं अब यहीं रहना चाहता हूँ, क्योंकि यहाँ के जीवन के साथ अभ्यस्त हो चुका हूँ। आप के मना करने पर भी मैं चला गया था, इसलिए क्षमा चाहता हूँ ।''

लेकिन सुदर्शन ने तोते को स्वीकार नहीं किया और उसके पिंजड़े को पुराने माल के गोदाम में डलवा कर उसे वापस भेज दिया।

सुदर्शन की पत्नी और बच्चों को यह देख कर बड़ी खुशी हुई। उन्होंने पूछा— "आखिर आप को भी, यह बात माननी ही पड़ी न कि वह जादू-टोने का तोता था ।''

सुदर्शन ने इसका कोई उत्तर नहीं दिया, सिर्फ़ आँख के कोनों में छलकती बून्दों को अंगुलियों से पोंछ लिया ।

बेताल ने यह कहानी सुना कर प्रश्न किया— "पहले तो सुदर्शन ने तोते को खुशी से नहीं भेजा और उसे भेजते समय भी उसने यह इच्छा व्यक्त की कि यदि तोता सदा के लिए

उसके पास रह जाये तो उसे बेहद खुशी होगी। किन्तु जब तोता वापस आ गया तो सुदर्शन ने अपने पास रखने से इनकार क्यों कर दिया ? क्या वह भी अपनी पत्नी और बच्चों की तरह यही समझने लगा कि वह जादू का तोता था ? यदि जान-बूझ कर भी इस प्रश्न का सन्तोष जनक उत्तर नहीं देंगे तो आप का सिर टुकड़े-टुकड़े हो जायेगा ।"

इस सन्देह का उत्तर देते हुए विक्रम ने कहा— "यह बात ठीक है कि सुदर्शन को तोते से शान्ति मिलती थी, इसीलिए वह उसे अपने से अलग करना नहीं चाहता था। तोता पिंजड़े के बन्धन से मुक्त होना चाहता था, तोते की यह इच्छा जान कर और उसके बार-बार अनुरोध करने पर भी सुदर्शन ने उसे जाने नहीं दिया। लेकिन जब तोते ने सुदर्शन के लिए राजगन्धी बूटी लाकर उसके प्राण बचाये तब सुदर्शन ने तोते को इसलिए जाने दिया क्यों कि तोता अपने परिवार और सम्बन्धियों के बीच रह कर उनके लिए कुछ करना चाहता था। तोते के इस विचार से वह बहुत प्रभावित हुआ था और यहं अनुभव करने लगा था कि मनुष्य का भी आत्म जनों के प्रति यही दृष्टिकोण होना चाहिये । लेकिन जब तोता अपनी सुविधा के लिए आत्म जनों को छोड़कर सुदर्शन के पास रहने के लिए आया तब उसने तोते के वास्तविक रूप को पहचान लिया। तोता सुदर्शन के प्रेम के कारण नहीं, बल्कि अपने स्वार्थ के कारण ही अपने सम्बन्धियों को छोड़ आया था । साधारण मनुष्यों में प्रायः यह बात देखी जाती है कि वे अपने साधनों से जिस काम को साध नहीं सकते, मौक़ा पाकर बड़े लोगों की सहायता से अपने लोगों को छोड़ कर भी उसे करने में नहीं हिचकते। तोते ने भी ऐसा ही किया था। वह अपने सुख के लिए अपने परिवार और समाज के प्रति कर्त्तव्य को भूल गया। इसीलिए सुदर्शन ने तोते को अपने पास रखने से इनकार कर दिया ।"

यह उत्तर सुन कर बेताल शव के साथ उड़ गया और पुनः पेड़ पर जा बैठा ।

घूसखोर ज्योतिषी

छत्रपुर राज्य में एक ज्योतिषी रहता था । नाम था कर्कट शास्त्री । वह इस बात का दावा करता था कि देवी की उस पर विशेष कृपा है और इसलिए वह किसी भी घटना अथवा अपराध की सच्ची जानकारी बता सकता है । उसने इसी आधार पर राजा का विश्वास प्राप्त कर दरबार में एक विशेष स्थान बना लिया था । राजा फरियादों और शिकायतों के बारे में कर्कट शास्त्री की सलाह के अनुसार ही फ़ैसला सुनाते । शास्त्री को जो अधिक घूस देता, वह उसी के पक्ष में फ़ैसला दिलवा देता ।

यह अफ़वाह राजा तक पहुँच गई । राजा ने मंत्री से इस बात की सच्चाई का पता लगाने के लिए कहा । मंत्री ने राजा को इसके लिए एक उपाय सुझाया । दूसरे दिन राजा ने कर्कट शास्त्री से कहा— "हमारे दरबार के एक अधिकारी श्रीपति ने किसी पर घूस लेने का आरोप लगाया है । मैंने किसी कारण वश उस व्यक्ति का नाम गुप्त रखा है । आप श्रीपति की शिकायत की सच्चाई का पता लगा कर कल दरबार में आकर बताइए । यदि वह व्यक्ति सचमुच रिश्वतखोर साबित हुआ तो उसे कठिन दण्ड दिया जायेगा ।

उसी दिन रात को श्रीपति कर्कट शास्त्री के घर पहुँचा और बोला— "मैंने एक व्यक्ति पर रिश्वत लेने का आरोप लगाया है । यदि यह आरोप सच साबित न हुआ तो राजा मुझे कठिन दण्ड देंगे । इसलिए सहायता के लिए मैं आप के पास आया हूँ ।" यह कह कर श्रीपति ने शास्त्री के हाथ एक हज़ार सिक्के दिये रख दी ।

दूसरे दिन दरबार में जब राजा ने श्रीपति की शिकायत के बारे में शास्त्री से पूछा तो उन्होंने देवी का नाम लेकर ध्यान करके कहा— "जय देवी ! महाराज, श्रीपति की शिकायत बिल्कुल सही है ।"

राजा ने तुरन्त सिपाहियों को आदेश दिया— "कर्कट शास्त्री को बन्दी बना लो ।"

शास्त्री काँपता हुआ बोला— "महाराज ! मुझे किस अपराध में बन्दी बनाया जा रहा है ?"

"श्रीपति ने जिस व्यक्ति पर घूस लेने का आरोप लगाया था, वह आप ही हैं ।" राजा ने उत्तर दिया ।

बावरों का गाँव

दुर्गा प्रसाद एक महीना पहले एक नये गाँव में जाकर बस गया था और वहीं कोई व्यापार करने के लिए सोच रहा था ।

एक दिन वह अपने हाथ में एक सीता फल लिए गाँव की एक गली से गुज़र रहा था । रास्ते में उसी गाँव का गोविन्द उसे मिल गया । गोविन्द को सीता फल बहुत पसन्द था । उसने आश्चर्य से पूछा— "दोस्त, यह बताओ, यह मौसम तो सीताफल का नहीं है । तुम्हें यह कैसे प्राप्त हुआ ?"

"हमारे पिछवाड़े में आम का एक बहुत पुराना पेड़ है । उसी में पूरे साल हर तरह का फल निकलता है ।" दुर्गा प्रसाद ने बड़े स्वाभाविक ढंग से बताया ।

"लेकिन यह कैसे सम्भव है ?" गोविन्द ने विस्मित होकर पूछा ।

"हो सकता है । योगी नित्यानन्द ने एक दिन मेरे कुएं के जल में मंत्र फूंक दिया था । बस, तभी से ऐसा हो रहा है । बहुत से लोग रोज मेरे कुएं का जल मांगने आते हैं लेकिन हम किसी को नहीं देते । यदि सब के पेड़ों से ऐसे ही फल निकलने लगें तो मेरी क्या विशेषता रह जायेगी ?" इतना कह कर दुर्गा प्रसाद आगे बढ़ गया ।

दुर्गा प्रसाद का घर वहाँ से काफी दूर था । फिर भी वह उसके विचित्र पेड़ को देखना जरूर चाहता था । वह इसी विचार से आगे बढ़ा जा रहा था कि बगल की एक गली से माधव सिंह निकला ।

गोविन्द कुछ कहना ही चाहता था कि माधव सिंह बड़े उत्साह से बोल उठा— "अरे गोविन्द ! यदि अभी तुम मेरे साथ दुर्गा प्रसाद के घर चलो तो तुम्हें एक अनहोनी चीज़ दिखाऊँ !"

"हाँ-हाँ ! मुझे भी मालूम है । आम के पेड़ में सीताफल । वही न !" गोविन्द ने झट कहा ।

कमल शुक्ल

"नहीं ।" माधव सिंह ने कहा— "उसके मकान के पिछवाड़े में एक विचित्र नाग है जो दर्शकों को अपना फण फैला कर आशीर्वाद देता है ।"

माधव ने उसे और भी अचरज में डाल दिया । लेकिन गोविन्द की बात से माधव भी चकित था । फिर दोनों ने यह निष्कर्ष निकाला कि शायद दुर्गा प्रसाद के घर में कई अनोखी बातें होंगी । उन अनोखी बातों को अपनी आँखों से देखने के लिए दोनों ही उसके घर की ओर चल पड़े ।

रास्ते में कमलराज ने एक और ही अनोखी बात सुनाई । "जानते हो ? दुर्गा प्रसाद के घर में पारिजात वृक्ष है जो दिन में सोता है और रात में जाग कर घर की रखवाली करता है । इतना ही नहीं ! यदि उसके पत्ते तोड़ो तो रोने लगता है और गुदगुदी करने पर हँसता है । क्या चमत्कार है ! हमने ऐसी अद्भुत चीज़ आज तक नहीं देखी । इसलिए किसी के कहने से सहसा विश्वास नहीं होता ।"

"यह सब जादू के खेल जैसा लगता है । लगता है दुर्गा प्रसाद जादूगर है ।" गोविन्द ने हैरान होते हुए कहा ।

अब कमल राज भी उनके साथ चल पड़ा । रास्ते में और भी कई लोग मिले और सब ने दुर्गा प्रसाद के बारे में एक से एक विचित्र बात बताई । एक ने बताया कि दुर्गा प्रसाद के घर में झाड़ू अपने आप साफ़ करता है । दूसरे ने सुनाया कि उसके घर में धन का अक्षय-पात्र है जिसमें से जितना भी धन बाँटो, कभी खत्म ही
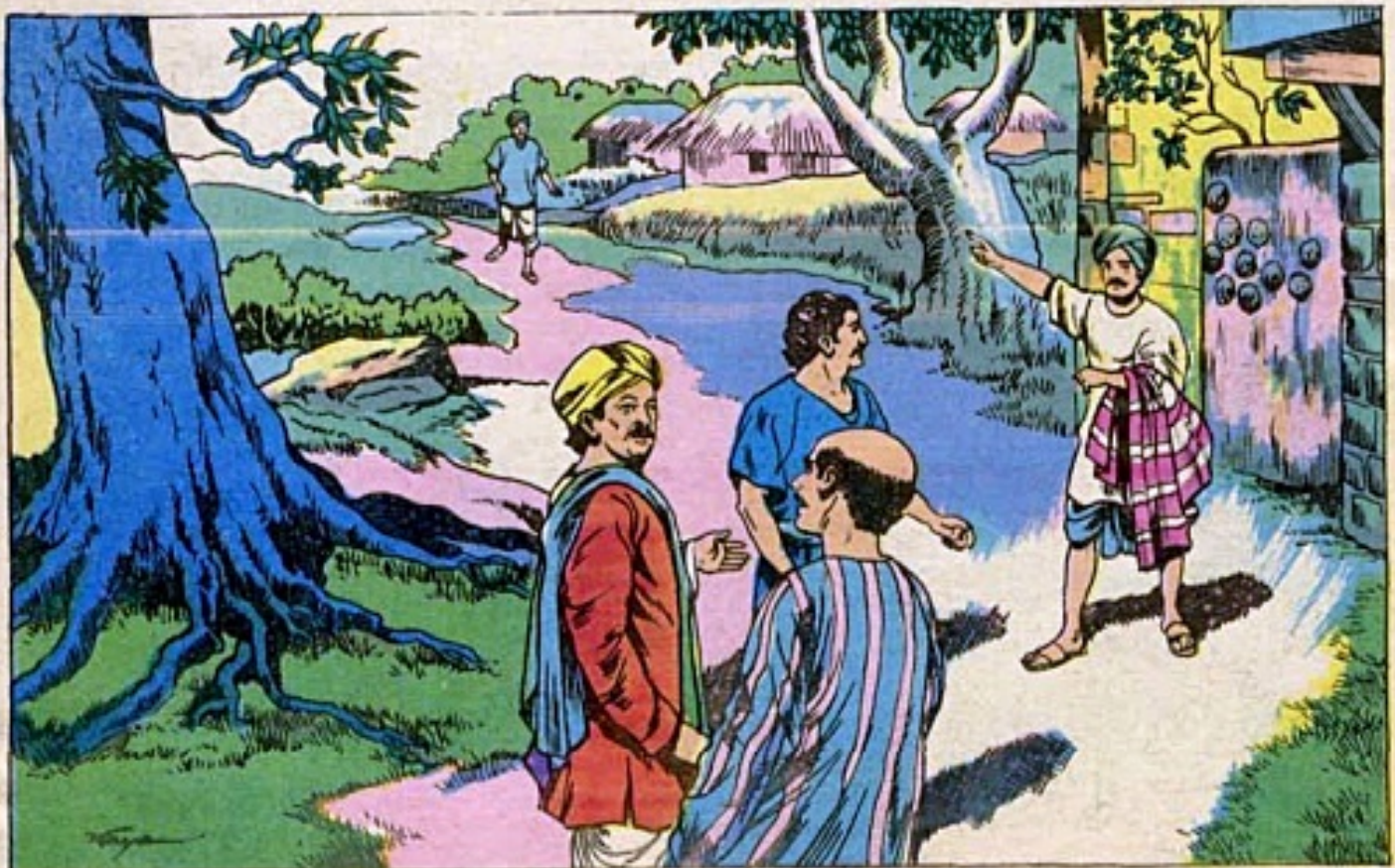
न होगा ।

इस प्रकार देखते-देखते वहां पर कुल दस लोग इकट्ठे हो गये और सब के सब मिल कर अनहोनी और अनोखी बातें देखने के लिए उत्साह पूर्वक दुर्गा प्रसाद के घर पहुँचे । उस समय घर का दरवाज़ा बन्द था । गोविन्द के दरवाज़ा खटखटाने पर किसी के आने की आहट बहुत देर तक सुनाई पड़ती रही, लेकिन दरवाज़ा नहीं खुला ।

ये लोग मन ही मन सोचने लगे कि जिस घर में ऐसी विचित्र बातें होती हों उसके घर के लोग देवता या भूत जैसे होंगे !

तभी एक विचित्र ध्वनि के साथ किवाड़ खुल गये और लगभग अठारह वर्ष के एक युवक ने उन सब की ओर आश्चर्य से देखते हुए पूछा— "आप लोग कौन हैं और किनसे मिलना चाहते हैं ?"

"हम लोग इसी गाँव के निवासी हैं और हमने सुना है कि यहाँ पर कई अद्भुत चीज़ें हैं । इसलिए हम तुम्हारे घर की उन्हीं अनोखी चीज़ें देखने आये हैं ।" गोविन्द ने बताया ।

"लेकिन हमारे घर में देखने योग्य अनोखी वस्तु कुछ भी नहीं है !" युवक ने कहा ।

इस पर गोविन्द ने अनोखी चीजों की सूची गिनाते हुए कहा— "हम लोगों को दुर्गा प्रसाद ने ही इन सब विचित्र बातों के बारे में बताया है । यह दुर्गा प्रसाद का ही घर है न ?" माधव ने प्रश्न किया ।

"हाँ, यह घर तो अवश्य उन्हीं का है । किन्तु वह घर कहीं और होगा जहाँ ये अनोखी

चीजें होंगी । यहाँ ऐसा कुछ भी नहीं है ।" इतना कह कर युवक खीझ कर घर के अन्दर चला गया ।

लोगों को अब यह शक हुआ कि यह युवक हम लोगों को वे अनोखी वस्तुएं दिखाना ही नहीं चाहता । इसलिए युवक के पीछे-पीछे वे लोग भी घर के अन्दर चले गये । उन्हें यह देख कर बड़ी निराशा हुई कि वहाँ ऐसी कोई चीज़ नहीं थी जो वे देखने आये थे । न आम का पेड़ और न पारिजात ! घर के युवक ने उन्हें सच ही कहा था ।

"फिर दुर्गा प्रसाद ने हम सब से झूठ क्यों कहा ? उसने हम सब को शायद बेवकूफ़ बनाया है ।" यह सोच कर वे सभी दुर्गा प्रसाद पर क्रोधित हो उसके बारे में अनाप-शनाप बकने लगे और उसकी खोज में निकल पड़े । संयोग की बात थी कि रास्ते में ही दुर्गा प्रसाद उन्हें मिल गये ।

सबसे पहले शोविन्द बरस पड़ा— "तुम ने हम सब को झूठी बातें बता कर उल्लू बनाया । बताओ, ऐसा क्यों किया ?"

"हाँ हाँ ! मैंने झूठी बातें बताई हैं । लेकिन तुमने विश्वास क्यों किया ? गलती तुम्हारी है । मैं तो यही जानना चाहता था कि इस गाँव में कौन-कौन बावरे हैं जो बिना सोचे-विचारे हर चीज़ पर विश्वास कर लेते हैं ।" दुर्गा प्रसाद ने बिना विचलित हुए उत्तर दिया ।

यों सब लोग दुर्गा प्रसाद पर काफी नाराज़ थे और सब के सब अपना क्रोध उस पर उतारना चाहते थे । लेकिन उसका उत्तर सुन कर सब एक-दूसरे का मुँह देखने लगे । किसी को पता नहीं चला कि उसकी बात का क्या उत्तर दे ।

थोड़ी देर में शान्त होकर गोविन्द ने पूछा— "लेकिन तुम्हें यह कैसे मालूम होगा कि किसने-किसने तुम्हारी बातों का यक़ीन किया है ?"

"क्यों ? यह तो बहुत आसान है । जो भी मेरी बात पर विश्वास करेगा, उसकी सचाई देखने वह मेरे घर जरूर जायेगा । मेरे घर पर मेरे बेटे से उसकी भेंट होगी । मैं उसकी बातचीत से यह समझ जाऊँगा कि कौन मेरे घर पर आया

था-और कौन-कौन इस गाँव में बावरा है !" दुर्गा प्रसाद ने गोविन्द को समझाते हुए बताया।

गोविन्द ने फिर पूछा— "क्या अभी तुम अपने घर जा रहे हो ? या कहीं और ?"

"नहीं ! अभी तो गाँव में कई और काम हैं। मैं शाम तक ही घर जाऊँगा।" दुर्गा प्रसाद ने बताया ।

इन सब लोगों ने भी अपने-अपने घर जाने के लिए दुर्गा प्रसाद से विदा लिया लेकिन दुर्गा प्रसाद के आँख से ओझल होते ही वे सब उसी के घर की ओर फिर चल पड़े ।

घर पहुँचते ही उसके लड़के ने पूछा— "आप लोग फिर क्यों आये ?"

गोविन्द ने धीमी आवाज़ में उसे समझाते हुए कहा— "हम सब तुम्हें एक-एक सिक्का देंगे लेकिन अपने पिता से यह मत बताना कि हम सब तुम्हारे घर पर अनोखी चीज़ें देखने आये थे ।"

"अच्छी बात है, नहीं बताऊँगा।" लड़के ने मुस्कुराते हुए आश्वासन दिया ।

इस पर गोविन्द लड़के के हाथ में दस सिक्के देकर अपने साथियों के साथ वापस चला गया ।

दुर्गा प्रसाद जब शाम को अपने घर वापस आया तो उसके लड़के ने हँसते हुए कहा— "पिताजी ! सवेरे से शाम तक आज हमारे घर आने वाले लोगों ने पाँच सौ सिक्के दिये हैं। अब आप को व्यापार के लिए कर्ज़ लेने की आवश्यकता नहीं पड़ेगी ।"

प्रसन्न होते हुए दुर्गा प्रसाद नें कहा— "हाँ, ऐसे ही बावरों के गाँव में हमारा व्यापार खूब चल सकता है। बावरे लोगों से भी अधिक बावरे तो वे हैं जो बावरा नहीं कहलवाने के लिए सिक्के देने को तैयार हैं। उनसे तो हमें और भी लाभ हो सकता है। इस गाँव में ऐसे ही लोगों की संख्या अधिक मालूम पड़ती है ।"

दूसरे ही दिन दुर्गा प्रसाद ने कुछ दुधारू गायें खरीद लीं और उसी गाँव में दूध का व्यापार करने लगा । देखते-देखते उसका व्यापार खूब बढ़ गया ।

पश्चात्ताप

एक समय प्राचीन काल में बोधिसत्व ने कोसल के राजा के रूप में जन्म लिया। इनका पुत्र सत्यसेन जब युक्त वयस्क हुआ तब राजा ने उन्हें युवराज घोषित किया। युवराज की पत्नी शंबुला देवी अपूर्व सुन्दरी, सुशीला और पतिपरायणा थी।

दुर्भाग्य से युवराज सत्यसेन कुष्ठ से ग्रस्त हो गया। अनेक वैद्यों और राज वैद्यों से उसकी चिकित्सा करायी गयी किन्तु रोग घटने की अपेक्षा बढ़ता ही गया। परिवार और समाज में जीवन बिताना उसके लिए दूभर हो गया। इसलिए अपने पिता की आज्ञा लेकर किसी निर्जन वन में निवास करने के लिए वह घर से निकल पड़ा। शंबुला देवी भी इनके पीछे-पीछे चल पड़ी। सत्यसेन ने उसे बहुत समझाया कि उसके साथ जंगल न जाये, वहाँ उसे बहुत कष्ट होगा, लेकिन शंबुला देवी हठपूर्वक पति की सेवा के लिए उसके साथ वन चली गई।

जंगल में फलदार वृक्षों तथा निर्मल जल वाले एक स्थान पर युवराज एक पर्णशाला बनवा कर उसी में रहने लगा।

शंबुला देवी नित्य प्रति दिन सवेरे उठ जाती और घर के काम-काज समाप्त करके पति के लिए दातून और जल लाती। फिर उसका मुँह धुला कर खाने के लिए जंगल से कन्द-मूल और फल लाती। सरोवर से जल लाकर नहलाती, फिर भोजन बना कर उसे खिलाती।

एक दिन शंबुला देवी फल की खोज करते दूसरी दिशा में बहुत दूर निकल गई। वहाँ एक सुन्दर सरोवर था। उसका जल बहुत शीतल, स्वच्छ और मधुर था। इसलिए उसे सरोवर में स्नान करने की इच्छा हुई। जब वह सरोवर से नहा कर बाहर निकली तो उसका शरीर शुद्ध सोने के समान दमकने लगा।

लौटते समय उसकी सुन्दरता और चमक देख कर उस मार्ग से गुजरनेवाला एक

(जातक कथा)

भील-सरदार रुक गया और उसने शंबुला देवी से प्रार्थना की कि वह उससे विवाह कर ले और भीलों की बस्ती में रानी बन कर रहे। लेकिन शंबुला देवी उसकी बात पर ध्यान दिये बिना आगे बढ़ गई। जब उसने उसका मार्ग रोक कर ज़िद किया तब शंबुला देवी ने क्रोधित होकर कहा— "अरे पापी! तेरा सर्व नाश हो।" यह कह कर उसने घड़े का जल उस पर छिड़क दिया। जल के स्पर्श होते ही वह बिजली के आघात की तरह वहीं गिर कर ढेर हो गया।

शंबुला देवी को पर्णशाला पहुँचने में काफी देर हो गई थी। इसलिए सत्यसेन ने क्रोधित होकर इसका कारण पूछा।

शंबुला देवी ने पति को सारी घटना सुना दी किन्तु उसे विश्वास नहीं हुआ। सत्यसेन ने घृणा पूर्वक कहा— "औरतें कल्पना गढ़ने में माहिर होती हैं, यह कौन नहीं जानता। ठीक है! तुम स्वेच्छा पूर्वक जहाँ चाहो विचरण करो।"

पति के मुख से इस तरह की बात सुन कर शंबुला को बहुत दुख हुआ। उसने प्रभु का नाम लेकर कहा— "स्वामि! यदि मेरी बातें सत्य हैं तो आप व्याधि से मुक्त हो जायेंगे और यदि झूठ है तो मुझे भी यह व्याधि लग जायेगी।" यह कह कर उसने घड़े का जल अपने पति पर छिड़क दिया।

जल का स्पर्श होते ही जादू की तरह सत्यसेन का रोग ठीक हो गया और ज़ंग की तरह उसकी व्याधि छूट गई। उसका शरीर भी निखर आया और सोने की भाँति दमकने लगा। उसे अपनी पत्नी की सचाई और पवित्रता पर उतनी प्रसन्नता नहीं हुई जितना उसे अपनी व्याधि से मुक्त होने का सुख हुआ।

रोग से छुटकारा मिलते ही उसकी महत्वाकांक्षा जाग उठी और वह राजा बनने का सपना देखने लगा। वह पर्णशाला और जंगल को छोड़ कर अपने राज्य में पहुँचा और नगर के बाहर एक उद्यान में ठहर कर पिता को अपने आगमन की सूचना भेज दी। राजा स्वयं छत्र और चंवर लेकर बेटे को लेने आये।

अपने बेटे को पूर्ण स्वस्थ देख कर कोसल नरेश की खुशी की सीमा न रही। शंबुला जैसी पतिव्रता बहू को पाकर उन्होंने अपने भाग्य को सराहा। वे इसी दिन की प्रतीक्षा और प्रार्थना कर रहे थे कि कब उनका बेटा स्वस्थ होकर

लौटे और राज-काज संभाले । इसलिए उन्होंने शीघ्र ही शुभ मुहूर्त देख कर अपने बेटे सत्यसेन का राज्याभिषेक कर दिया तथा शंबुला को पटरानी बना दिया । इस प्रकार राज्य-भार बेटे-बहू पर सौंप कर राजा वानप्रस्थ जीवन बिताने लगे ।

राजा ने शंबुला देवी को पटरानी अवश्य घोषित किया था, लेकिन सत्यसेन न जाने क्यों उसके प्रति उदासीन रहता था तथा अन्य पत्नियों के साथ अधिक समय बिताता था । शम्बुला देवी इसलिए हर समय दुखी रहने लगी ।

एक बार राजा शंबुला देवी से मिलने आये। उन्होंने उसे दुखी देख कर पूछा— "बहू ! तुम दुर्बल क्यों होती जा रही हो ? तुम्हें किस बात का दुख है ? बताओ बेटी !"

शंबुला देवी ने आँखों में आँसू भर कर कहा— "पति का प्रेम ही पत्नी का जीवन है। यदि वही न हो तो राज-पाट तथा जीवन के सभी भोग बेकार हैं । यदि पति नहीं प्रसन्न हों तो मैं कैसे प्रसन्न रह सकती हूँ ?"

राजा ने सत्यसेन को बुला कर समझाया— "बेटा ! कृतघ्नता से बढ़कर कोई पाप नहीं । जब तुम भयंकर व्याधि से ग्रस्त थे और लोगों के बीच रहने में लज्जा के कारण जब तुम जंगल चले गये तब भी परछाईं की तरह शंबुला ने तुम्हारा साथ नहीं छोड़ा और रात दिन तुम्हारी सेवा में लगी रही । उसी की पवित्रता की शक्ति ने तुम्हें इस शाप से मुक्त किया है । लेकिन जब तुम वैभव और शक्ति सम्पन्न हो गये हो तो उस देवी को भूल गये हो ! यह राज्य और वैभव किसी को भी प्राप्त हो सकता है लेकिन पतिव्रता पत्नी किसी भाग्यवान को ही प्राप्त होती है ।

ऐसी पत्नी को तुमसे कष्ट हो तो इसमें तुम्हारा ही अहित है, इस बात को ठीक से समझ लो ।"

पिता की बात सुन कर सत्यसेन की आँखें खुल गईं और वह अपनी करनी के लिए पश्चाताप करने लगा । उसने शंबुला से क्षमा माँगी और उसे पटरानी का आदर देकर उसके साथ सुख पूर्वक जीवन यापन करने लगा ।

तेल की लगी आग पर पानी नहीं डालते, तुम रेत या धूल ले आओ. इससे आग रोकी जा सकती है.

पेड़ों के आसपास कभी भी कैंप-फायर मत बनाओ, यह खतरनाक हो सकता है.

आप कौन हैं ?

मैं स्पार्की हूँ, मेरा उद्देश्य है अग्नि से बचाव करना.

जब तुम्हारा कैंप खतम हो जाय तो आग को पूरी तरह बुझा देना.

बहुत-बहुत शुक्रिया स्पार्की

लेकिन पहले से आग बुझा लें.
एक दिन का पूरा मजा ले लिया.

ब्रिटिश राज्य का प्रारम्भ

पंद्रहवीं शताब्दी में ही पश्चिम के देशों की लालच भरी नज़र भारत के अतुल वैभव और समृद्धि पर पड़ने लगी थी। इटली के नाविक कोलम्बस स्पेन की राजदम्पति से प्रोत्साहन पाकर समुद्री मार्ग से भारत का पता लगाने के लिए चल पड़ा किन्तु भटक कर १४७८ में अमेरिका पहुँच गया। इस प्रकार उन्होंने अमेरिका की खोज की।

उसी वर्ष पुर्तगाल का नाविक वास्कों दि गामा भारत पहुँचा। कालिकट के हिन्दू राजा जमोरिन ने उसका स्वागत किया। यूरोप से भारत के लिए सीधे समुद्री मार्ग की खोज करने वाला पहला व्यक्ति वास्को दि गामा ही था। इसके बाद डच, डेन्स, अंगरेज़ और फ्रांसिसी व्यापारी भी भारत आने लगे।
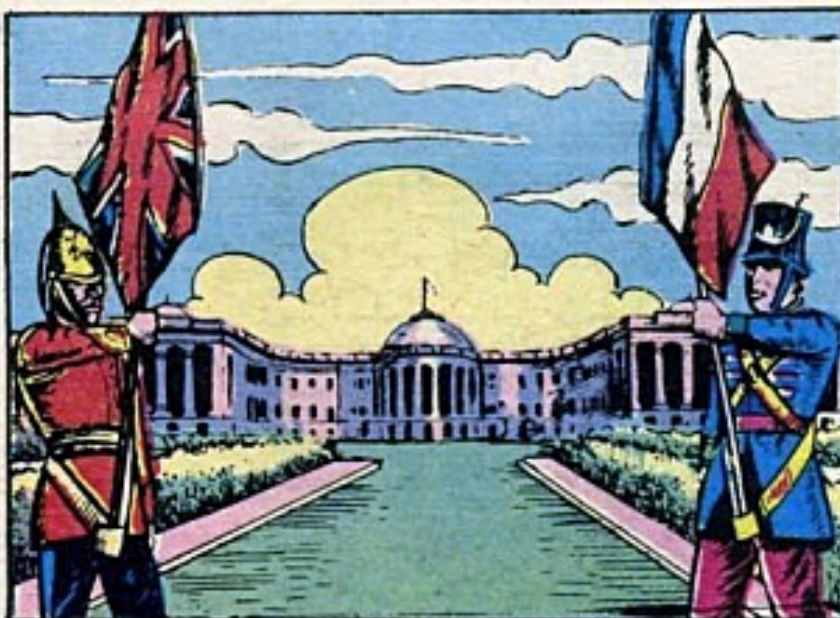
उनमें फ्रांसिसी और अंगरेज़ ही भारत में अपने पाँव जमा सके। व्यापारी के रूप में आनेवाले फ्रांसिसी और अंगरेज़ इस देश पर शासन करने की होड़ लगाने लगे। इनके विरुद्ध भारत के शासकों को मराठों ने संगठित करने का प्रयास किया किन्तु वे सफल न हो सके।
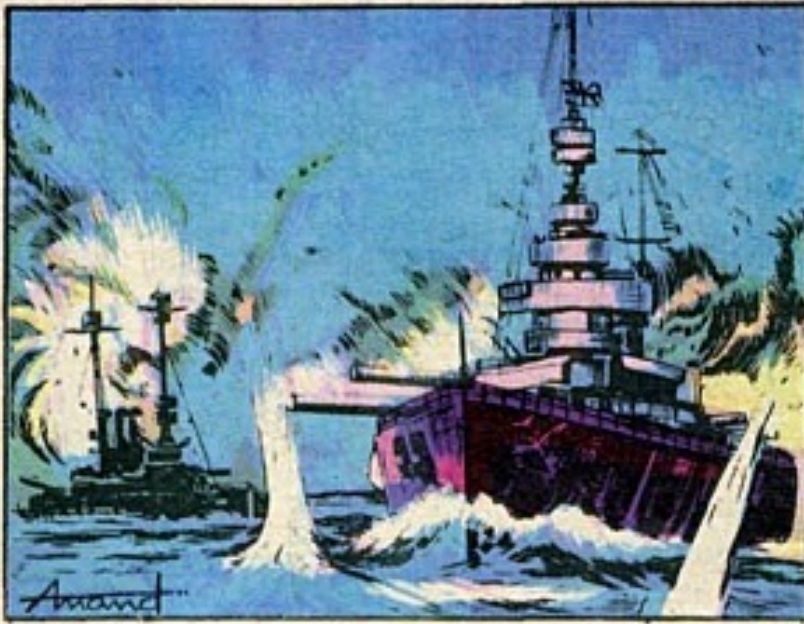
दक्षिण भारत में पांडिचेरी को केंद्र बना कर डूप्ले के नेतृत्व में फ्रांसिसियों ने अपनी जड़ें जमा दीं। सन् १७४० में यूरोप में युद्ध प्रारम्भ हो गया जिसमें फ्रांस और इंगलैंड जानी दुश्मन बन गये। फलस्वरूप फ्रांसिसी और अंगरेज़ी पोतों के बीच दक्षिण भारत के समुद्रों पर युद्ध होने लगा।

रॉबर्ट क्लाइव नामक एक साहसी युवक के कारण अंगरेज़ों के भाग्य चमक गये। उद्दण्ड स्वभाव का क्लाइव अठारह वर्ष की अल्प आयु में ही घर से भाग आया और ईस्ट इंडिया कम्पनी में एक गुमास्ता बन गया। इसके बाद वह मद्रास में निर्मित सेंट जार्ज क़िला में आया।
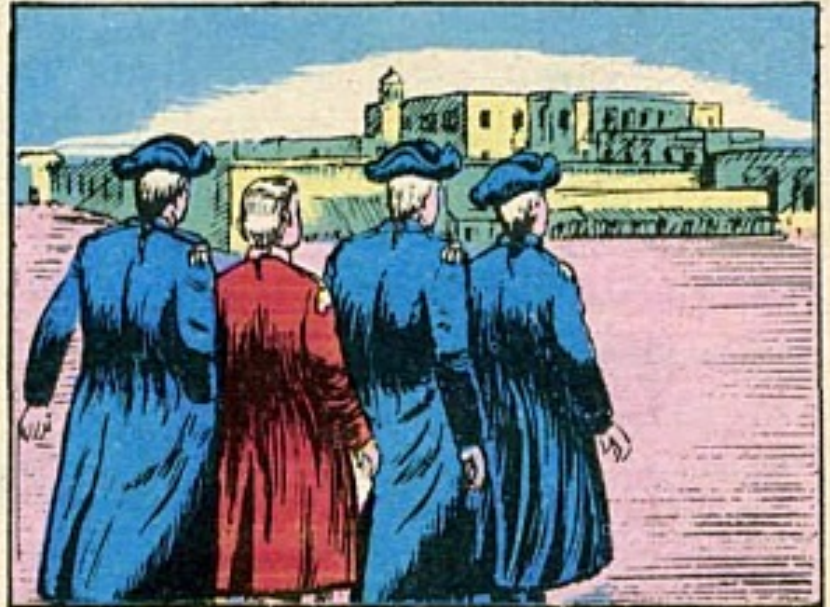
बंगाल में युवा नवाब सिराजुद्दौला ने अंगरेज़ों का मुक़ाबला किया। अपनी राजधानी मुर्शिदाबाद से ईस्ट इंडिया कम्पनी की राजधानी कलकत्ता को घेर कर उसने उस पर क़ब्ज़ा कर लिया। कम्पनी का विलियम फ़ोर्ट उसके हाथ में आ गया।

कलकत्ता के हाथ से निकल जाने से भारत में रहने वाले सभी अंगरेज़ चिन्तित हो उठे। रॉबर्ट क्लाइव सेना लेकर कलकत्ता पहुँचा और विलियम फ़ोर्ट को वापस अपने अधीन ले लिया। सिराजुद्दौला ने पुनः आक्रमण किया किन्तु क्लाइव ने उससे सन्धि कर ली। इस सन्धि के अनुसार नवाब वापस लौट गया।

सिराजुद्दौला के चले जाने पर उसके सेनापति मिरजाफर को अधिकार का प्रलोभनन देकर क्लाइव ने एक षड़यंत्र रचा। इसके बाद अचानक नवाब के साथ युद्ध की घोषणा कर दी। सेनापति मिरजाफ़र ने नवाब को धोखा दिया, और युद्ध में सेना नहीं भेजी।

परिणामतः नवाब हार गया। मिरजाफ़र के आदेश से उसके सैनिकों ने नवाब की निर्दयतापूर्वक हत्या कर दी। मिरजाफर नवाब बन गया। जनता से लिया हुआ सारा कर अंगरेज़ उससे वसूलने लगे। इस प्रकार मिरजाफ़र को क्लाइव और ईस्ट इंडिया कम्पनी को करोड़ों रुपये चुकाने पड़े।

मिरज़ाफ़र का व्यवहार सन्तोषजनक न था, इसलिए अंगरेज़ों ने उसके दामाद मीर कासिम को नवाब की गद्दी पर बिठाया। मीर कासिम स्वतंत्र स्वभाव का था इसलिए वह अंगरेज़ों के सामने कभी नहीं झुका। दोनों के बीच का विवाद अन्त में १७६४ ई० में बक्सर युद्ध के रूप में परिणत हो गया। मीरकासिम को दिल्ली के शासक शाह आलम ने सहायता पहुँचाई।

इस युद्ध में मीरकासिम हार कर दिल्ली भाग गया और वहाँ गरीबी में ही उसकी मृत्यु हो गई। क्लाइव राजपाल बन कर पुनः भारत वापस आ गया। उसने बंगाल, बिहार और उड़ीसा प्रान्त से कर-वसूली का अधिकार मुगल शासक को देकर बहुत धन प्राप्त किया।

इसके बाद क्लाइव वीरोचित स्वागत की कामना से इंग्लैंड पहुँचा लेकिन आशा के विपरीत लोगों ने उसकी घूसखोरी, धोखे बाजी, और क्रूरता पूर्ण व्यवहार के लिए उसकी बहुत निंदा की। इस अपमान को न सह सकने के कारण क्लाइव ने छुरी भोंक कर आत्महत्या कर ली। फिर भी, भारत में ब्रिटिश साम्राज्य की नींव डालने वाला व्यक्ति क्लाइव ही था।

विश्वास पात्र नौकर

अर्जुनसिंह गाँव का एक धनी-मानी व्यक्ति था। बहुत सालों से उसके घर में एक नौकर काम कर रहा था—शरभ। वह बिल्कुल बहरा था। जब तक बहुत ऊँची आवाज़ में चिल्ला कर उसे कहा नहीं जाता, तब तक उसके पल्ले कुछ नहीं पड़ता। और अक्सर वह कुछ का कुछ ही समझ लेता तथा उल्टा-पुल्टा काम करके लौटता। फिर भी अर्जुनसिंह उस पर नाराज़ नहीं होता बल्कि उसे बहुत प्यार से रखता।

लेकिन अर्जुनसिंह का बेटा माधोसिंह उसके बहरेपन से काफी परेशान था। इसलिए जब-तब उसके उल्टे-पुल्टे कामों से खीझ कर पिता के सामने ही अपना क्रोध निकाला करता— "इस बहरे से काम लेने के लिए गला फाड़ना पड़ता है। और फिर यह मुफ़्त में तो नहीं करता। उसी पैसे से दूसरा नौकर भी तो रखा जा सकता है। लेकिन पता नहीं इस बहरे में क्या नग जड़ा है कि इसे घर से निकाला ही नहीं जाता।"

अर्जुनसिंह ने अपने बेटे को समझाते हुए कहा— "बेटा! शरभ बहरा जरूर है, लेकिन यह विश्वास पात्र और स्वामिभक्त है। फिर यह बहुत सालों से हमारे परिवार में रह रहा है। इसलिए इसे हटाना उचित नहीं होगा। यह बात मत भूलो कि ऐसे नौकर मुश्किल से ही मिल जाते हैं।"

यद्यपि शरभ माधोसिंह की हर आज्ञा का बड़ी सावधानी से पालन करता और उसकी हर सुख-सुविधा का ध्यान रखता, फिर भी न मालूम क्यों माधो सिंह उसे देखते ही जल-भुन जाता। उसका वश चलता तो उसे फौरन निकाल देता, लेकिन वह अपने पिता से लाचार था।

एक बार अर्जुनसिंह घर की जिम्मेवारी बेटे पर सौंप कर पत्नी के साथ तीर्थाटन पर चले

विनोद पाठक

गये। शरभ को हटाने का माधोसिंह को अच्छा मौक़ा मिल गया। पिता के जाने के दूसरे दिन ही उसने शरभ को छुट्टी दे दी।

सरल और सीधा-सादा शरभ समझ न सका कि उसे अचानक क्यों हटा दिया गया। वह तो जानता ही था कि माधोसिंह तुनक-मिजाज है और बात-बात पर उसे डाँटता-फटकारता रहता है, इसलिए उसने सोचा कि नौकरी से हटाने का कारण पूछने से कोई फ़ायदा नहीं, इसलिए वह भी बिना कारण पूछे चुपचाप घर से चला गया।

उसने गाँव के कई घरों में नौकरी की तलाश की किन्तु किसी ने काम नहीं दिया। उल्टा उस पर दोषारोपण करने लगे— "अरे तुम तो निरे बहरे हो! और लगता है, अब तो चोरी भी करने लगे हो, तभी तो माधोसिंह ने तुम्हें निकाल दिया है।"

शरभ को नौकरी से हाथ धोने का उतना ग़म नहीं था जितना कि चोरी के आरोप से उसे दुख हुआ। अब उसे समझ में आया कि माधोसिंह ने उसे चोर समझ कर ही निकाला है।

जब उसे कहीं स्थायी नौकरी नहीं मिली तो वह मजदूरी करके अपना पेट पालने लगा।

एक दिन वह एक गली से गुजर रहा था। तभी दूसरी गली से दो सांड लड़ते हुए मुख्य रास्ते पर आ गये। उसी समय माधोसिंह का पाँच साल का लड़का-रामचंद्र जो पाठशाला जा रहा था, नुक्कड़ पर उन सांडों के सामने पड़ गया।

सांडों के रंभाते और आपस में सींगों से मारते देख डर के मारे कुछ लोग चबूतरों पर चढ़ गये। वे सब लड़के को देख एक साथ चिल्ला पड़े— "अरे वह तो माधोसिंह का लड़का है। सांडों के बीच में कहीं कुचल न जाये।" लेकिन उसे बचाने कोई आगे न बढ़ा।

दूर से ही शरभ ने सांडों के समीप रामचंद्र को देख लिया और तेजी से दौड़ा। जब तक वह सांडों के पास आया, रामचंद्र एक सांड से टकरा कर गिर गया। जैसे ही एक सांड का पिछला पाँव उसके शरीर पर पड़ने वाला था कि

शरभ ने उसे खींच लिया और झट उसे कन्धे पर उठा पास के एक घर के सामने चबूतरे पर चढ़ गया। चबूतरे पर चढ़ते समय उसका पाँव फिसल गया और वह गिर पड़ा, लेकिन रामचंद्र को कन्धे पर से गिरने नहीं दिया। शरभ के पाँव में थोड़ी चोट आ गई और खून बहने लगा।

माधोसिंह को जब इस घटना की खबर मिली तो वह तुरन्त घटना स्थल पर दौड़ा आया। अपने बेटे रामचंद्र को सही सलामत देख वह बहुत प्रसन्न हुआ। वहाँ पर एकत्र लोगों ने माधोसिंह को जब शरभ की बहादुरी की कहानी सुनाई, तब वह शर्म के मारे गड़ गया। उसने अपनी धोती से उसके पाँव का खून पोंछ कर उसको चबूतरे पर बिठाया और अपनी भूल को स्वीकारते हुए कहा— "मैंने तुम पर झूठा आरोप लगा कर घर से निकाल दिया फिर भी तुमने मेरे बेटे की जान बचाई। सचमुच तुम्हारी सचाई और स्वामि भक्ति प्रशंसनीय है।" इतना कह कर माधोसिंह शरभ को भी हाथ का सहारा देकर अपने घर ले गया।

एक सप्ताह के बाद अर्जुनसिंह तीर्थाटन से लौट कर वापस आ गया। उसी समय माधोसिंह शरभ को हाथ का सहारा देकर फाटक की ओर ले जा रहा था। यह दृश्य देख कर जहाँ उसे एक ओर सन्तोष हुआ तो दूसरी ओर आश्चर्य भी।

उसने आश्चर्य के साथ पूछा— "क्या बात है? शरभ को सहारा देकर चला रहे हो! एक तो पहले से ही बहरा था। अब लंगड़ा भी हो गया!"

"बाबूजी! शरभ भले ही बहरा और लंगड़ा है लेकिन है सचमुच सच्चा और विश्वास पात्र, जैसा कि आपने कहा था।" यह कहते हुए माधोसिंह ने शरभ के लंगड़ा होने की सारी कहानी सुना दी।

अपने पोते को खतरे से सुरक्षित देख कर तथा शरभ को अपने बेटे के क्रोध से मुक्त पाकर अर्जुनसिंह को सच्चे तीर्थाटन का आनन्द मिल गया।
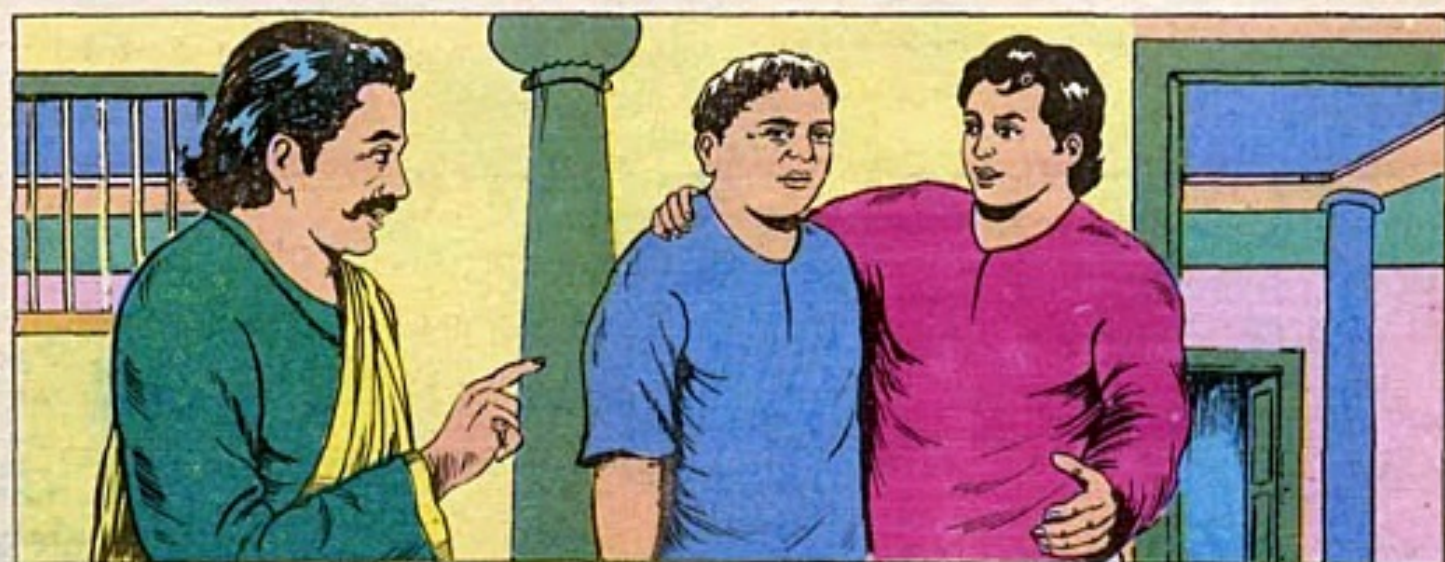
कनकदास

कनकदास अपनी कंजूसी के लिए विख्यात था। उसका नारा था— "चमड़ी जाये तो जाये, दमड़ी न जाये।" इस प्रकार उसकी एक दिन बिना दवा-दारू के मृत्यु हो गयी।

मृत्यु होते ही वह तुरंत स्वर्ग के द्वार पर पहुँच गया। द्वारपाल ने आश्चर्य से पूछा— "तुम और स्वर्ग के द्वार पर! तुमने कौन सा पुण्य किया कि स्वर्ग में दौड़े आये?"

"मुझे एक बार गोदावरी के मेले में एक कौड़ी मिल गई थी। उसे मैंने एक भिखारिन बुढ़िया को दान में दे दिया था। चित्रगुप्त के खाते में होगा। जाकर पता लगा लो।" कनकदास ने आदत के अनुसार थोड़ा बिगड़कर कहा।

द्वारपाल कनकदास को साथ लेकर चित्रगुप्त के पास गया। चित्रगुप्त ने खाता देख कर कहा— "तुम उसी कौड़ी के कारण कुछ क्षण के लिए स्वर्ग आ गये। अब सब दिन नरक भुगतना होगा।"

कनकदास बिना विचलित हुए झट बोला— "जब नरक में ही रहना है तो यह कौड़ी आप के पास क्यों रहे?" यह कह कर कनकदास चित्रगुप्त से कौड़ी वसूल कर नरक की ओर चल पड़ा।
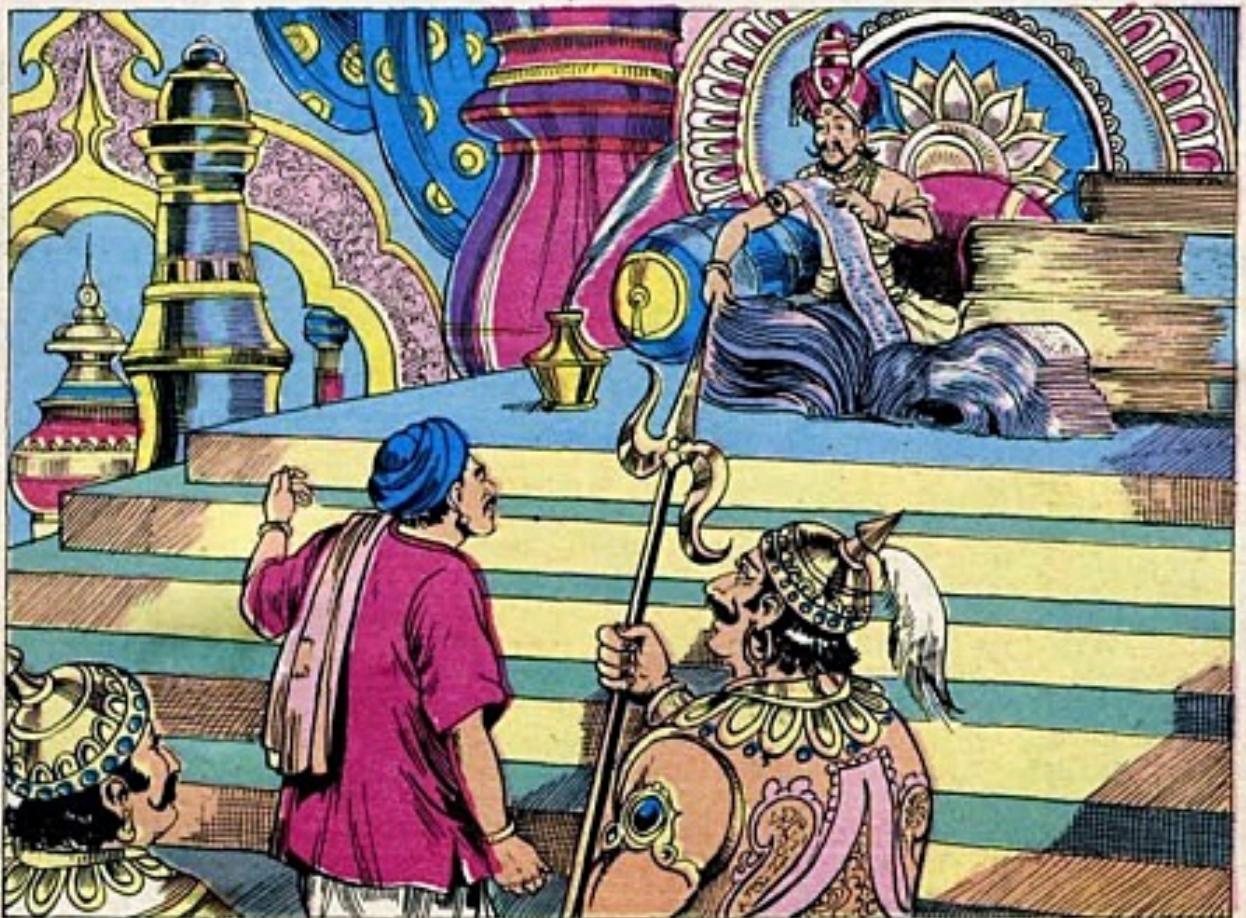
बातचीत का मनोविज्ञान

विदेह राज्य की राजकुमारी रत्नप्रभा एक दिन सखियों के साथ महल के उद्यान में विहार कर रही थी। थोड़ी देर बाद थक कर वह महल में लौट आई। सखियाँ घबारा कर उसकी सेवा में जुट गईं।

रत्नप्रभा शय्या पर विश्राम कर रही थी तथा उसकी तीनों सखियाँ उसकी परिचर्या में लगी हुई थीं। तभी राजकुमारी ने मुस्करा कर पूछा— "क्या तुम में से कोई मेरी थकावट का असली कारण बता सकती है ? जो भी सही उत्तर देगी उसे मैं उपहार के रूप में अपना रत्नहार दे दूँगी।"

"यदि सही कारण न बता सकी तो...?" मरीचिका नाम की सखी ने पूछा।

"ऐसी हालत में गाल पर सिर्फ़ दो चपत लगेंगे।" राजकुमारी हसँती हुई बोली।

"तब अपनी क़िस्मत ज़रूर आजमाऊँगी।" मरीचिका ने कहा।

"दोपहर की कड़ी धूप में देर तक आँख-मिचौनी खेलने से ही आप थक गईं। इतनी देर तक दौड़ने से किसे थकावट न होगी ! आपने तो इसे सह भी लिया, किसी और के बस की बात न थी।"

उसकी बात खत्म हुई नहीं कि उसके गाल पर दो चपत पड़ गये। बाक़ी दोनों सखियाँ खिलखिला कर हँस पड़ीं।

मरुद्वती नामक सखी ने कुछ सोचकर कहा— "सरोवर में अधिक देर तक तैरते रहने के कारण ही आप थक गईं। इतना श्रम तो पुरुष भी नहीं सह पाते। आपने अपने शरीर को हद से ज़्यादा कष्ट पहुँचाया, इसी का यह परिणाम है।"

यह सुन कर राजकुमारी क्रोधित-सी हो गई और उसने मरुद्वती के गाल पर दो करारे तमाचे जड़ दिये।

तीसरी सखी मंदाकिनी ने पहले दोनों

सतीश कुमार

सखियों की ओर क्रोध भरी नज़र से देखा। फिर मुस्कराती हुई राजकुमारी की ओर देख कर बोली— "युवरानी की थकावट का असली कारण सिर्फ़ मैं जानती हूँ। आपने आज बाग से एक माला के बराबर फूल तोड़े हैं। जब माला बनाने के लिए आपने मेरे हाथों में वे सारे फूल रखे तभी आप का फूल जैसा चेहरा कुम्हलाया लग रहा था। उसी समय मैं समझ गई थी कि आप फूल तोड़ने से बहुत ज़्यादा थक गई हैं। अन्य सखियों ने, लेकिन, इस ओर ध्यान नहीं दिया।

मन्दाकिनी की बात पूरी होते ही रत्नप्रभा प्रसन्न हो शय्या पर उठ बैठी और अपने कंठ का रत्नहार उतार कर उसके कंठ में डाल दिया।

यह देख कर बाक़ी दोनों सखियाँ मन्दाकिनी की तेज बुद्धि पर विस्मित रह गईं।

थोड़ी देर के बाद जब रत्नप्रभा सो गई तो तीनों सखियाँ एक कोने में जाकर बातचीत करने लगीं।

मन्दाकिनी से दोनों सखियों ने पूछा— "अरी मंदाकिनी, तुम तो जानती हो कि राजकुमारी का शारीरिक गठन कैसा है! और तुमने तो एक बार राजकुमारी के बारे में यह भी कहा था कि यह तो देखने में मुट स्त्री की तरह लगती है जब कि सभी मोटी औरतें ऐसी नहीं लगतीं।"

"हाँ हाँ कहा था, तो क्या?" मन्दाकिनी ने उत्तर दिया।

"तो क्या ऐसी युवरानी अंजुलि भर फूल तोड़ने में कहीं थक जायेगी? क्या वह इतनी कोमल और सुकुमार है? राजकुमारी की प्रशंसा और उपहार के लालच में तुम भविष्य में पता नहीं क्या-क्या झूठ बोलोगी।" यह कह कर दोनों सखियाँ मन्दाकिनी का मज़ाक उड़ाने लगीं।

मन्दाकिनी पल भर के लिए मौन रही। फिर मन्द हास के साथ बोली— "मैंने जो कुछ कहा है उसमें कुछ भी झूठ नहीं है। यदि मेरी बात पर गहराई से विचार करो तो वह सच्ची प्रतीत होगी। सब को मालूम है कि राजकुमारियाँ सुन्दर और कोमल होती हैं।

लेकिन हम लोगों की राजकुमारी उनसे अलग हैं। यह बात राजकुमारी भी भली भाँति समझती हैं। यदि बातचीत में कोई उन्हें अपने रूप की ओर संकेत भर भी दे दे तो वह सहन नहीं कर पायेंगी। ऐसी हालत में हम नाहक़ उनके क्रोध का शिकार क्यों बने ?"

"तो क्या हम लोगों ने जो कुछ कहा उससे उनके स्थूल शरीर का कुछ संकेत मिलता है ?" दोनों सखियों ने आँखें लाल करती हुई पूछा।

मन्दाकिनी ने उन्हें शान्त करती हुई कहा—"नाराज़ क्यों होती हो ? पहले मेरी बात को ध्यान से सुनो। तुम दोनों ने धूप में दौड़ने अथवा सरोवर में देर तक तैरने की बात कह कर उनके स्थूल और पुरुष जैसी कठोर शारीरिक बनावट की याद दिला दी। साथ में यह भी कहा कि पुरुष भी ऐसा नहीं कर पायेंगे। इससे उनके मन में बहुत पीड़ा हुई और इसी से उन्हें क्रोध भी आया और तुम दोनों को तमाचे भी खाने पड़े।

मैंने उनकी यह व्यथा भाँप ली। इसलिए मैंने उनके मन में कोमल रूप का भाव पैदा किया और फूल तोड़ने की बात को ही उनकी थकावट का कारण बताया। इस उत्तर से राजकुमारी को बड़ी प्रसन्नता हुई। मानव मन को समझ कर बातचीत का सूक्ष्म ज्ञान न रखने के कारण ही तुम दोनों को चपत खाने पड़े और मुझे रत्नहार मिला।"

यह कह कर हँसती हुई वह फिर बोली—"लेकिन यह उपहार सिर्फ़ मेरा नहीं, बल्कि हम तीनों का है। इसे हम आपस में बराबर बाँट लेंगे।"

मन्दाकिनी की बातों से सन्तुष्ट हो दोनों सखियाँ बोलीं— "तुम्हारी बातों से हमें यह ज्ञान हो गया कि रत्नप्रभा जैसी राजकुमारी से हमें कैसे बातचीत करनी चाहिये। बातचीत का यह मनोविज्ञान भविष्य में हमारे लिए निश्चय ही लाभ दायक सिद्ध होगा। उस रत्नहार में हमें हिस्सा देने की कोई जरूरत नहीं है।" यों कह कर उन दोनों ने मन्दाकिनी का हृदय से अभिनन्दन किया।

तुरन्त दान—महा कल्याण

पंढर पुर गाँव में पं विष्णुदत्त नाम का एक कथा वाचक रहता था। वह गाँव-गाँव में जाकर पुराणों की कथा सुनाता और श्रोताओं से उसे जो कुछ मिलता, उसी से अपने परिवार का पालन-पोषण किया करता।

एक बार पं विष्णुदत्त निकट के गाँव में पहुँचा और उसने वहाँ के लोगों को कथा सुनाने की इच्छा प्रकट की। गाँव वाले कथा सुनने को उत्सुक तो थे किन्तु वहाँ कोई ऐसा जनस्थान न था जहाँ कथा का आयोजन हो सके। रामगुप्त वहाँ के एक धनी व्यक्ति थे। उनके घर का अहाता बहुत बड़ा था इसलिए गाँव के कुछ भक्त लोग कथा वाचक को लेकर रामगुप्त के पास गये और कथा के लिए अहाता देने का अनुरोध करते हुए बोले— "गाँव भर में यही एक मात्र स्थान कथा के उपयुक्त है। पंडित जी को दान दक्षिणा हम लोग चन्दा करके दे देंगे।"

यद्यपि रामगुप्त को पुराणों की कथा में कोई रुचि न थी, फिर भी गाँव के कथा प्रेमियों और भक्तों ने इस कार्य के लिए उसी के घर को उपयुक्त समझा, यह उसके लिए बहुत खुशी की बात थी। इसलिए वह प्रसन्न होता हुआ बोला— "यह तो मेरे लिए बहुत सौभाग्य की बात है कि मेरे घर पर कथा-वाचन का धर्म-कर्म हो। आप खुशी से ऐसा करें। साथ ही यदि कथावाचक पंडित श्री मेरी कुटिया पर ही निवास करने की कृपा करें तो यह मेरे लिए और भी खुशी की बात होगी।"

उसी दिन राम गुप्त के अहाते में कथा प्रारम्भ हो गई।

मंच पर पं विष्णुदत्त बैठे और उनके पास ही भगवान का एक चित्र फूलों से सजा दिया गया। चित्र के सामने एक थाल रख दिया गया जिसमें श्रोता अपनी श्रद्धा भक्ति के अनुसार भेंट रख देते और अपने स्थान पर बैठ जाते। कुछ

(पचीस वर्ष पूर्व चन्दामामा में प्रकाशित कहानी)

लोग कथा के अन्त में अपनी भेंट देने के विचार से आते ही कथा सुनने के लिए बैठ गये । रामगुप्त ने भी अपनी भेंट कथा के अन्त में ही देने का निश्चय किया और इसके लिए एक सौ एक रुपये नक़द और एक रेशमी शाल अपने बरामदे में संभाल कर रख दिया ।

कथा आरम्भ होने के पूर्व श्याम गुप्त नामक एक व्यक्ति ने थाल में अपनी भेंट के रूप में इकीस रुपये डाल दिये और कथा वाचक के गले में तीस रुपये की एक शाल लपेट दी । वह भी गाँव का एक धनी-मानी व्यक्ति था लेकिन रामगुप्त के सामने वह छोटा ही था । उसने अगली पंक्ति में बैठते हुए मन में विचार किया कि यदि यह कथा वाचन उसके सभापतित्व में करवाया जाता तो और भी अधिक राशि से वह कथा वाचक का सम्मान करता ।

रामगुप्त बराबर इस बात का ध्यान रख रहा था कि कौन व्यक्ति कितनी भेंट चढ़ा रहा है । सबसे बड़ी रक़म श्याम गुप्त की ही थी । उसके मन में विचार आया कि इससे थोड़ी अधिक राशि देने से भी उसका दान सबसे अधिक होगा, फिर एक सौ एक रुपये देने का क्या अर्थ है । और क़ीमती रेशमी शाल के स्थान पर एक जोड़ी धोती से काम चलाया जा सकता है । यह विचार आते ही कथा के बीच में ही वह उठ कर बरामदे में आया और भेंट की राशि और वस्तु को बदल दिया ।

कथा वाचक कथा कहते जा रहे थे और सभी तन्मय होकर कथा का आनन्द ले रहे थे । पंडित जी बहुत चतुर और बुद्धिमान थे । उन्होंने रामगुप्त के चेहरे पर बदलते हुए भावों को देख कर उसके मन की बात ताड़ ली । उन्होंने उसे
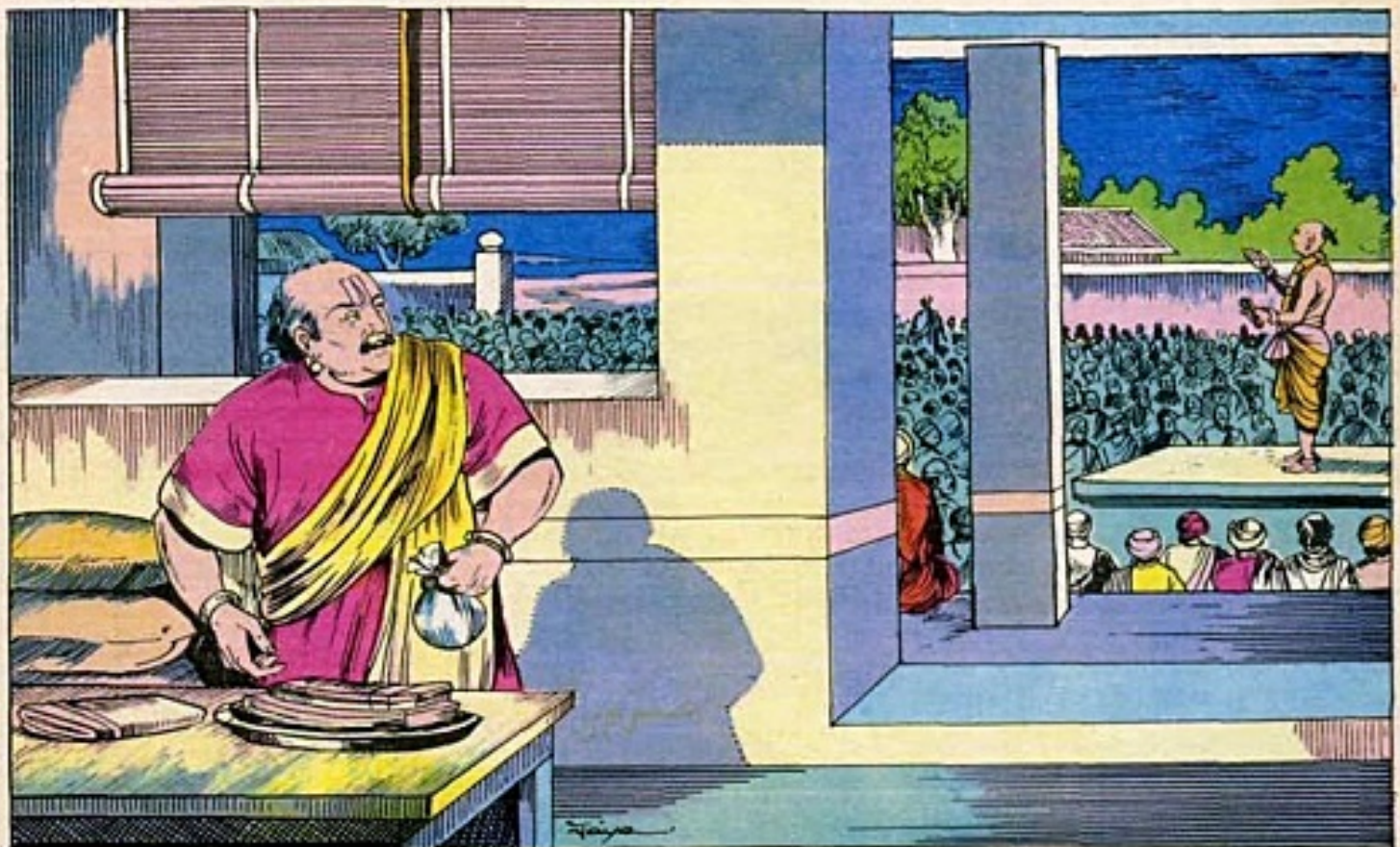
उठ कर जाते हुए और वापस आते हुए ध्यान से देखा और समझ गये कि रामगुप्त बरामदे में किसलिए गया होगा ।

जब रामगुप्त बरामदे में से वापस आकर बैठ गया तब पंडित जी ने उसको लक्ष्य करते हुए एक प्रसंग कथा इस प्रकार सुनायी—

कर्ण सिर्फ एक महान वीर ही न थे, एक महान दानवीर भी थे । कहते हैं कि उनके यहाँ से कोई भी याचक खाली हाथ नहीं लौटा ।

एक दिन कर्ण स्नान करने के पूर्व अपने शरीर पर तेल मालिश कर रहे थे । तभी द्वार-पाल ने सन्देश भेजा कि द्वार पर एक याचक आया है । कर्ण ने उसे अपने पास अन्दर भेज देने का आदेश दिया ।

याचक ने प्रवेश करते ही कहा— "महाराज की जय हो । मैं एक गरीब ब्राह्मण हूँ । कुछ दान की इच्छा लेकर आया हूँ ।"

उस समय कर्ण के बायें हाथ में सोने का पात्र था जिसमें से तेल लेकर वे दायें हाथ से शरीर पर लगा रहे थे । ब्राह्मण के मुँह से याचना की बात सुनते ही उन्होंने बायें हाथ का स्वर्ण पात्र ब्राह्मण को दे दिया ।

ब्राह्मण ने दान लेते हुए पूछा— "महाराज ! आप तो ज्ञानी और दान वीर हैं । शास्त्रों में लिखा है कि दान का महत्व दायें हाथ से देने में है । लेकिन आपने बायें हाथ से मुझे क्यों दान दिया ? क्या इसके पीछे कोई रहस्य है ?"

कर्ण मुस्कुराते हुए बोले— "दान का एक ही रहस्य है कि वह अविलम्ब होना चाहिए । जैसे ही दान की इच्छा हो, बिना विचारे बिना देर किये तुरन्त दान दे देना चाहिए । जैसे-जब मैंने दान देना चाहा तब पात्र मेरे बायें हाथ में था । उसे दायें हाथ में बदलते समय मेरा मन भी बदल सकता था । इसलिए मैंने बायें हाथ से ही दान दे दिया ।"

यह प्रसंग कथा सुना कर पंडित जी मुख्य कथा पर आ गये । राम गुप्त को यह कथा सुन कर ऐसा लगा जैसे कथा वाचक ने उसके मन की बात ताड़ ली हो । इसलिए कथा समाप्त होने पर उसने पहले से भी अधिक राशि और कीमती उपहार देकर पं विष्णुदत्त को विदा किया ।

जैसे को तैसा

गगनपुरी में सूर्यकान्त नाम का एक युवक रहता था। उसका विवाह पड़ोसी गाँव के एक सम्पन्न परिवार की सुन्दर और सुशील कन्या चंद्रकिरण के साथ हो गया।

कुछ दिनों के बाद सूर्यकान्त का मित्र मुकुन्द अपनी पत्नी के साथ शहर से उससे मिलने आया। मुकुन्द की पत्नी गौरी बहुत अच्छा गाती थी। उसका गीत सुनकर सूर्यकान्त और चंद्रकिरण दोनों को बड़ा आनन्द आया। एक सप्ताह तक अतिथि रह कर मुकुन्द पत्नी के साथ शहर वापस चला गया।

मुकुन्द के जाने के बाद सूर्यकान्त ने अपनी पत्नी से कहा— "तुम भी गौरी की तरह क्यों नहीं संगीत का अभ्यास करती ?"

अपने पति के मुँह से अचानक इस तरह की बात सुनकर उसे आश्चर्य हुआ। चंद्रकिरण ने कभी भी संगीत का अभ्यास नहीं किया था और सीखने की रुचि भी न थी। इसलिए वह बोली— "क्या इस तरह जब चाहें तब किसी भी उम्र में संगीत और कला की साधना हो सकती है ? गौरी ने छः साल की आयु से ही संगीत-साधना शुरू कर दी थी। मेरा कंठ भी मधुर नहीं है। ऐसी हालत में इस उम्र में संगीत-साधना क्या संभव है ?"

चंद्रकिरण ने समझा कि उसका यह उत्तर सुन कर सूर्यकान्त फिर कभी उसे संगीत सीखने के लिए नहीं कहेगा। लेकिन सूर्यकान्त ने खीझ कर कहा— "कंठ -स्वर की क्या बात है। गाने का अभ्यास करते रहने से कंठ में अपने आप मधुरता आ जाती है। और फिर सभी गवैयों के कंठ तो मधुर नहीं होते। रही अभ्यास की बात। कलाकार तो सारी आयु अभ्यास करते रहते हैं। सिर्फ़ चाह और लगन की बात है। जहाँ चाह वहाँ राह। तुम अभ्यास करके तो देखो !"

कुछ दिनों के बाद उस गाँव में ओंकार शर्मा नाम के एक चित्रकार ने एक चित्रकला प्रदर्शनी

राम मोहन

लगायी । उसके सारे चित्र ग्रामीण जीवन से प्रभावित और गाँव के प्राकृतिक वातावरण को प्रतिबिम्बित करते थे ।

उस प्रदर्शनी को देखने के बाद चंद्रकिरण ने सूर्यकान्त से कहा— "कितने सुन्दर और सजीव चित्र बनाये हैं ओंकार शर्मा ने । लगता है गाँव के प्राकृतिक दृश्यों को ही कागज़ पर चिपका दिये गये हों । क्यों नहीं आप भी ऐसे चित्र बनाते ? मुझे ऐसे चित्र अच्छे लगते हैं !"

पत्नी से ऐसा सुझाव सुन कर सूर्यकान्त क्रोधित-सा होकर बोला— "तुम क्या समझती हो कि चित्र बनाना मज़ाक का काम है ? इसके लिए बचपन से रुचि होनी चाहिए और फिर यह हर उम्र में सीखा भी तो नहीं जा सकता !"

"मैं नहीं कहती कि चित्रकारी आसान काम है । लेकिन चाह और लगन हो तो हर काम सम्भव है । अभ्यास करते रहेंगे तो कभी न कभी अच्छे चित्र बनने लगेंगे । कहावत भी है न रसरी आवत जात से सिल पर होत निशान ।" चंद्रकिरण ने मुस्कुराती हुई यह सुझाव दिया ।

उस समय सूर्यकान्त को संगीत सीखने के लिए पत्नी को दी गई अपनी सलाह याद आ गई । उसने अपनी गलती को समझते हुए कहा— "एक दिन मैंने भी गौरी का संगीत सुन कर तुम्हें संगीत सीखने की मूर्खतापूर्ण सलाह दी थी । ललित कलाओं की साधना साधारण बात नहीं है । इसके लिए रुचि के साथ-साथ किसी योग्य गुरु के चरणों में बैठ कर बहुत लम्बे काल तक अभ्यास की ज़रूरत पड़ती है । वरना किसी कला में हम प्रवीण नहीं बन सकते ।"

"अब आपने भी यह समझ लिया कि जिस काम को बचपन में नहीं कर सके वह अब क्या करेंगे !" चंद्रकिरण ने कहा ।

"लेकिन इतना तो कर सकते हैं कि कलाकारों का आदर करें और उनकी कला की प्रशंसा कर उनका उत्साह बढ़ायें तथा साथ ही उन की कला से आनन्द प्राप्त करना सीखें ।" सूर्यकान्त ने कहा । यह सुन कर चंद्रकिरण बहुत प्रसन्न हुई कि उसके पति ने कला के महत्व को समझ लिया था ।

विष्णु पुराण

मन्दोदरी ने भी, विभीषण की भाँति ही, रावण को सलाह देते हुए कहा— "हे नाथ ! आपने सीता को इस प्रकार लाकर अच्छा नहीं किया । आप तो सीता जी को अकेली और असहाय पाकर स्वर्ण अथवा पशु-पक्षी की तरह उठा लाये । शायद आपने यह अत्याचार इसलिए किया कि लक्ष्मण ने आप की बहन शूर्पणखा के नाक-कान काट लिये और रामचंद्र ने उससे विवाह करने से इनकार कर दिया । मैं तो समझती हूँ कि यदि अब भी सीता जी को लौटा दें तो दोनों पक्ष सर्व नाश से बच जायेंगे ।"

"तुम्हारा पति कायर और डरपोक नहीं है जो साधारण मानव से डर जाये । जिस महाबली रावण से सभी देवता थर-थर काँपते हैं, उसे तुम मनुष्य के सामने झुकने को कहती हो ? तुम मुझे कायरता का पाठ पढ़ाने का व्यर्थ प्रयास मत करो । राम मेरा बाल भी बाँका नहीं कर सकता । यदि उसने मुझसे टकराने की कोशिश की तो उसे प्राणों से हाथ धोने पड़ेंगे ।"

इस प्रकार रावण अपने हठ पर अड़ा रहा और किसी के परामर्श पर उसने ध्यान नहीं दिया ।

इधर रावण पर चढ़ाई करने के लिए राम वानरों की सेना संगठित करने लगे । सुग्रीव, नील, अंगद, सुषेण तथा जांबवान आदि बड़े-बड़े योद्धाओं ने जंगल में इधर-उधर फैले सभी वानरों को एकत्र किया । हनुमान जी की देखरेख और मार्गदर्शन में सेना के संगठन और
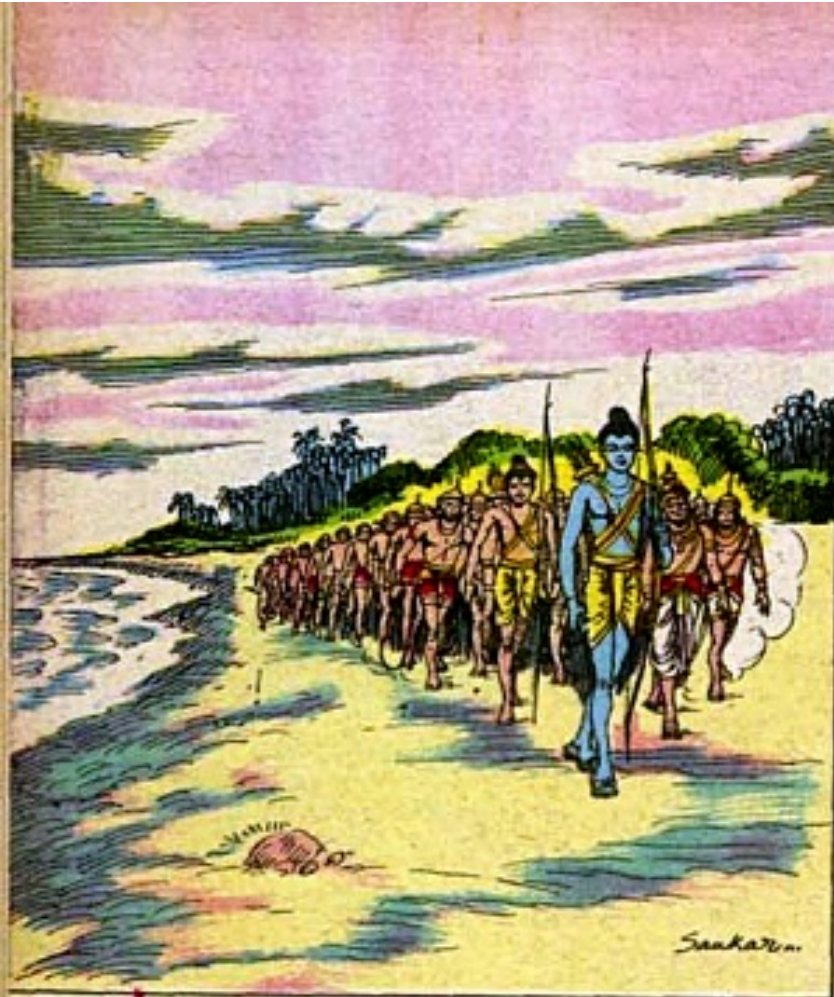
हमले की पूरी तैयारी हो गई ।

नील की देखरेख में सेतु का निर्माण शुरू हुआ । वानर बड़ी-बड़ी शिलाएं लाकर समुद्र में डालने लगे । हनुमान पर्वतों को ही उठा कर जल में फेंकने लगे । छोटे-छोटे बन्दर छोटे-छोटे पत्थर ला रहे थे । इस प्रकार एक सौ योजन लम्बे पुल का निर्माण भी पूरा हो गया ।

विभीषण ने लंका छोड़ दी और राम के पास आकर शरण के लिए प्रार्थना की । रामचंद्र ने उन्हें अभय देते हुए लंका का राजा बनाने का वचन दिया तथा उसी क्षण समुद्र के जल से लंकापति के रूप में विभीषण का अभिषेक भी कर दिया ।

सेतु-निर्माण के बाद राम ने धनुष-बाण धारण कर वानर सेना के साथ लंका पर आक्रमण कर दिया । इनके साथ एक ओर लक्ष्मण और दूसरी ओर हनुमान थे । विभीषण उनके पीछे थे ।

जब गुप्तचरों ने रावण को खबर दी कि राम ने वानरों की बड़ी भारी सेना के साथ लंका पर चढ़ाई कर दी है, तो रावण, सहसा, विश्वास न कर सका । वह सोचने लगा— "सौ योजन तक समुद्र पर सेतु का निर्माण कैसे संभव हुआ ? लेकिन तब भी क्या वह मनुष्य राम तीनों लोकों को भयभीत करने वाले रावण का संहार कर अपनी पत्नी को वापस ले जा सकेगा ? असम्भव !" फिर वह ज़ोर से अट्टहास करता हुआ बोला— "जब मौत आती है तो चींटी के भी पर निकल आते हैं । आने दो बन्दरों को ।"

तभी रावण के मंत्री प्रहस्त ने सुझाव दिया— "प्रभु ! मार्ग में ही शत्रु का सामना करना तथा नगर में प्रवेश करने से पूर्व ही उसे नष्ट कर देना उचित होगा ।"

इस पर रावण अहंकार से बोला— "उन्हें नगर में प्रवेश करने दो । कुंभ कर्ण ने बहुत दिनों से भर पेट भोजन नहीं किया है । वे लोग जाल में फँसी मछलियों की भाँति मेरे भाई की भूख मिटाने में काम आयेंगे ।"

रामचंद्र सेना के साथ लंका के समुद्र तट पर पहुँच चुके थे और सेना की व्यूह रचना कर रहे थे ।

तभी अंगद समुद्र तट पर से उछल कर रावण के पास आकर बोला— "हे रावण ! मैं बालि का पुत्र हूँ। मेरे पिता जी ने एक बार आप को अपनी पूँछ से उठा कर दूर फेंक दिया था। उस समय से आप मेरे पिता जी के प्रति बहुत आदर-भाव रखते हैं इसीलिए मैं आप को यह समझाने आया हूँ कि आप राम जी के साथ शत्रुता छोड़ कर उनकी शरण में आ जाइए। वे आप को क्षमा कर देंगे। लेकिन अहंकार वश यदि आप यह समझते हैं कि वानर सेना आप का क्या बिगाड़ लेगी तो यह आप की निरी भूल होगी। आप को बार-बार यह बताने की जरूरत नहीं होनी चाहिये कि वानर कितने वीर और पराक्रमी होते हैं।"

अंगद की बातों से रावण को क्रोध आ गया इसलिए उसने अंगद को मारने के लिए अपनी तलवार खींच ली। अंगद ने उसका गर्व चूर करने के लिए उसके मुकुट पर एक लात मारा, जिससे रावण धरती पर गिर पड़ा। इसके बाद अंगद अपनी सेना में वापस आ गया।

इसके बाद वानरों ने लंका नगर को चारों ओर से घेर लिया और राक्षसों को मारने लगे।

चींटियों की तरह अनगिनत संख्या में बन्दरों को नगर में प्रवेश करते देख रावण ने कुंभकर्ण को जगाया।

कुंभकर्ण ने एक समय घोर तपस्या द्वारा ब्रह्मा को प्रसन्न करके यह वर मांगा था कि वह छः महीने तक खाता रहे और सिर्फ़ एक दिन सोये। लेकिन, ब्रह्मा ने सरस्वती की सहायता से उसके वरदान में यह भूल करवा दी कि वह छः महीने सोये और सिर्फ़ एक दिन खाये। ब्रह्मा ने जल्दी ही तथास्तु कह कर यह चेतावनी भी दी कि यदि उसकी नींद पूरी नहीं हुई और छः महीने पूरे होने से पहले ही किसी ने जगा दिया तो उसकी शक्ति घट जायेगी।

इसलिए जब रावण ने उसे जगाया तो वह झल्ला उठा। उसने भी रावण को समझाया कि वह नाहक़ झगड़े में न पड़े और रामचंद्र की पत्नी को लौटा दे।

कुंभकर्ण के उपदेश सुन कर रावण की त्योरियाँ चढ़ गई और क्रोध में बोला— "ठीक है, या तो युद्धभूमि में शत्रु का सामना करो या

कायरों की तरह दुबक कर सो जाओ ।"

कुंभकर्ण क्रोध में था ही । वह अपने भाई को कुपित होते देख लड़ाई के लिए चला गया और बन्दरों को पकड़-पकड़ कर खाने लगा । अन्त में राम के साथ युद्ध करते- करते वह काम आ गया ।

कुंभकर्ण के बाद एक-एक करके कई राक्षस योद्धा युद्ध में मारे गये । इसके बाद रावण का बेटा महाबली इंद्रजित क्रोध से गरजता हुआ रणक्षेत्र में आया।

रावण को अपने बेटे की अलौकिक वीरता पर गर्व और विश्वास था । उसने एक बार युद्ध में इंद्र को परास्त कर दिया था, इसलिए उसका नाम इंद्रजित पड़ा था । वह मेघों में छिप कर उन्हीं की तरह गर्जन करता हुआ युद्ध कर सकता था, इसीलिए वह मेघनाद कहलाया । वह मंत्र तंत्र में कुशल बड़ा ही मायावी योद्धा था, साथ ही वह एक कुशल राजनीतिज्ञ भी था । उसके प्राणों को खतरा सिर्फ़ ऐसे व्यक्ति से हो सकता था जिसने चौदह वर्षों तक ब्रह्मचर्य पालन कर निद्रा और आहार का त्याग कर दिया हो । लेकिन ऐसे व्यक्ति की कल्पना भी असम्भव-सी लगती थी इसलिए रावण समझता था कि उसका बेटा अमर है और वह अकेला ही राम की सारी सेना को गाजर-मूली की तरह काट देगा ।

इंद्रजित ने युद्ध के मैदान में आते ही राम की सेना पर गाज ढाह दिये । उसने माया से सींता की सृष्टि करके राम के सामने उसके टुकड़े-टुकड़े कर दिये । लक्ष्मण ने रामचंद्र को इंद्रजित के माया- युद्ध के बारे में बताया और इंद्रजित के साथ घोर युद्ध किया ।

रावण ने विद्युज्जिह्व राक्षस के द्वारा माया से रामचंद्र का सिर तैयार करवाया और उसे त्रिशूल से भेद कर सीता को दिखाने का आदेश दिया ।

सीताजी ने इस रहस्य को समझते हुए क्रोधावेश में कहा— "तुम लोगों की झूठी माया सब मैं समझती हूँ । लेकिन याद रखो कि शीघ्र ही रावण के दसों असली सिरों की यही हालत होनेवाली है ।"

इंद्रजित ने मेघों में छिप कर राम और

लक्ष्मण दोनों पर नागास्त्र की वर्षा की और उन्हें नाग पाश में बाँध दिया। तब गरुड़ ने आकर नागों को नष्ट कर उन्हें नाग-पाश से मुक्त किया। इसके बाद इंद्रजित लक्ष्मण के बाण से मारा गया।

अपने पुत्र की मृत्यु के बाद रावण का बल क्षीण हो गया। इसलिए पाताल-लंका के राजा अपने भाई महिरावण से वह सहायता मांगने गया और राम-लक्ष्मण को ले जाकर काली देवी को उनकी बलि देने का अनुरोध किया।

रावण के अनुरोध करने पर महिरावण सोये हुए राम और लक्ष्मण को चुरा कर पाताल ले गया और काली के मन्दिर में उनकी बलि देने लगा।

हनुमान ठीक समय पर पहुँच कर राम-लक्ष्मण को मन्दिर से उठा ले आये। इसके बाद राम-लक्ष्मण और महिरावण में घोर युद्ध हुआ, लेकिन महिरावण नहीं मरा। राम की भक्त चंद्रसेना महिरावण के महल में बन्दिनी थी। वह महिरावण की मृत्यु का रहस्य जानती थी। हनुमान ने उससे यह भेद लेकर उसे निर्मूल कर दिया। तभी राम के हाथों महिरावण युद्ध में मारा गया।

हनुमान ने महिरावण की मृत्यु के बाद मत्स्य वल्लभ को पाताल-लंका का राजा बना दिया और राम-लक्ष्मण को अपने कन्धों पर बिठा कर लंका लौट आये।

महिरावण की मृत्यु के बाद रावण की कमर टूट गई। उसके सभी बहादुर योद्धा मारे जा चुके थे। जब राम को परास्त करने के उसके सारे प्रयास विफल हो गये तब उसने इस्पात के योद्धा और चतुरंगी सेना की सृष्टि करने वाले पाताल-लंका योग का शुभारंभ किया। अंगद उसके योग में विघ्न डालने के लिए अदृश्य करणी विद्या की सहायता से अदृश्य होकर रावण के महल में चला गया और रावण के समक्ष ही मन्दोदरी का जुड़ा पकड़ कर खींच लिया। इससे रावण का ध्यान भंग हो गया।

अन्त में निराश होकर रावण अकेला ही युद्ध के लिए निकल पड़ा। युद्ध में आते समय मन्दोदरी ने उसे फिर समझाया— "क्यों नहीं

लिए उसे एक महायुध अस्त्र प्रदान किया था। रावण ने क्रोध में आकर उसी अस्त्र का लक्ष्मण पर प्रयोग किया। लक्ष्मण उस अस्त्र का आघात सह न सके और मूर्छित हो गये।

हनुमान शीघ्र ही संजीवनी बूटी के लिए हिमालय पर्वतों की ओर चल पड़े और रातोंरात औषधि लाकर लक्ष्मण की प्राण-रक्षा की।

इंद्र ने राम की सहायता के लिए मातलि सारथी के साथ एक दिव्य रथ भेजा। राम उसी रथ पर सवार हो रावण के साथ युद्ध करने लगे। दो महान योद्धाओं में भयंकर युद्ध होने लगा।

रावण दस मुखों से घोर गर्जन करता हुआ बिजली की गति से राम पर बाणों की बौछार करने लगा। राम बड़ी कुशलता और सहजता से उसके बाणों को काटते जाते। उनका हस्तलाघव दर्शनीय था।

रावण की नाभि में एक अमृत-पात्र था। जब तक वह अमृत-पात्र सुरक्षित था, तब तक रावण को मारना असम्भव था। यह रहस्य सिर्फ़ विभीषण जानता था। उसने राम के पास जाकर धीरे से उनके कान में यह भेद बता दिया। राम ने झट ब्रह्मास्त्र का प्रयोग कर उस अमृत कलश को नष्ट कर डाला। रावण का विशाल काय शरीर निष्प्राण हो धरती पर लुढ़क गया।

विभीषण ने अपने भाई की मृत्यु का रहस्य बता दिया था, इसीलिए उसी का संकेत करते

अब भी सीता को लौटा कर राम से क्षमा माँग लेते ? वे अवश्य आप को क्षमा कर देंगे।"

लेकिन रावण हताश होकर भी अपने हठ पर अड़ा रहा। "चाहे सूर्य और चंद्र अपने निश्चय से भले हट जायें लेकिन रावण का निश्चय अटल है, भले ही इसके लिए प्राणों की बाजी क्यों न लगानी पड़े।" आवेश में ऐसा कहते हुए दस घोड़ों के रथ पर सवार हो रावण युद्ध के लिए चल पड़ा।

सबसे पहले उसकी मुठभेड़ लक्ष्मण से हुई जिसके हाथों उसके बेटे इंद्रजित की मृत्यु हुई थी। उसे देखते ही रावण बौखला उठा।

रावण ने एक बार इंद्र को पराजित कर उसे बन्दी बना लिया था। इंद्र ने उससे मुक्त होने के
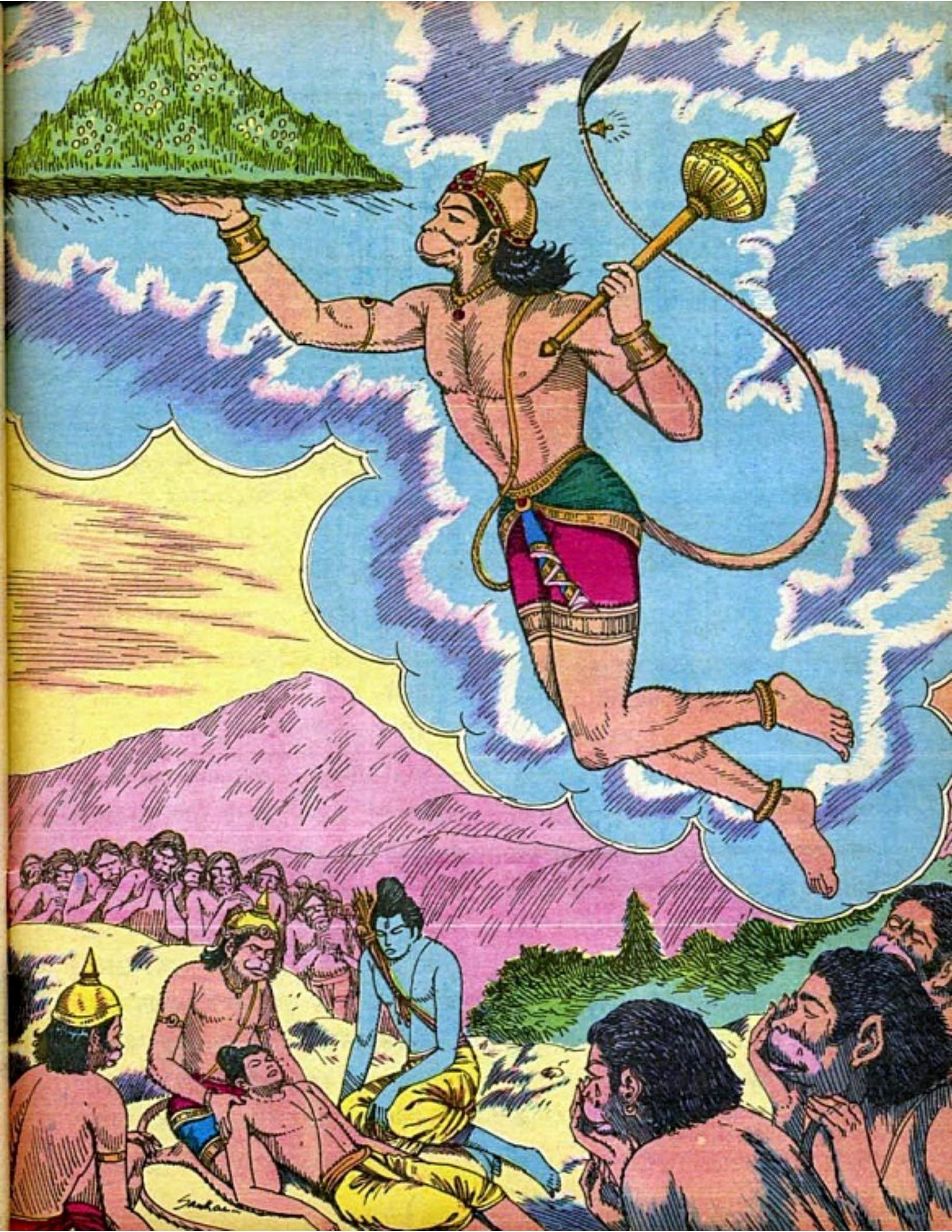
हुए यह कहावत प्रचलित हो गई— "घर का भेदी लंका ढाये ।"

रावण-वध के साथ ही लंका में राक्षसों का साम्राज्य समाप्त हो गया । विभीषण लंका के नये राजा बनाये गये ।

रावण और कुंभकर्ण की मृत्यु के साथ जय-विजय का दूसरा जन्म समाप्त हो गया ।

अशोक वाटिका से सीता को लाकर राम ने उनसे कहा— "सीते ! दुष्ट रावण को दण्ड देकर मैंने एक राजा का कर्त्तव्य निभाया है । रावण ने तुम्हें बहुत दिनों तक अपने पास रखा है । ऐसी हालत में यदि मैं तुझे स्वीकार करके अयोध्या ले जाऊँ तो समाज को आपत्ति होगी । अतः अब तुम स्वतंत्र होकर इच्छानुसार जीवन-यापन कर सकती हो ।"

रामचंद्र जी की ये बातें सुन कर सीता मर्माहत हो उठीं । उन्होंने अग्नि परीक्षा देने का निश्चय किया ।

उनकी इच्छा के अनुसार एक अग्निकुण्ड तैयार किया गया । कुण्ड में धू-धू कर आग की लपटें उठने लगीं । सीता राम के चरणों में अपना ध्यान लगा कर उन लपटों में कूद पड़ीं । अग्नि ज्वाला और भी भड़क उठी और सीता उसमें अदृश्य हो गयीं ।

कुछ देर बाद उन लपटों में से अग्निदेव प्रकट हुए । उनकी नवविकसित कमल जैसी अंजुलि में सीता जी विराजमान थीं ।

"सीता जी पावक जैसी पावन है । इन्हें स्वीकार कीजिए ।" रामचंद्र को सम्बोधित करते हुए अग्निदेव ने कहा ।

उसी समय आकाश में विमान में बैठे दशरथ सबको दर्शन देते हुए बोले— "बेटे रामचंद्र ! अग्नि परीक्षा से यह बात सिद्ध हो गई है कि सीता पवित्र है । इसलिए अब तुम निःसंकोच और निर्भय होकर अयोध्या लौट जाओ और वहाँ का राज्य संभालो । अयोध्या की प्रजा तुम्हारी प्रतीक्षा कर रही है ।"

रामचंद्र जी ने झुक कर पिता को प्रणाम किया और सब को साथ ले पुष्पक विमान से अयोध्या लौट आये ।

बदला

फारस में तबरीस्तान नाम का एक छोटा-सा प्रदेश था। वहाँ का राजा बहुत दुष्ट था। उसके दो वज़ीर थे ।

बड़े वज़ीर की एक खूबसूरत बेटी थी। एक दिन राजा की किसी तरह उस पर नज़र पड़ गई। वह उसकी सुन्दरता पर मुग्ध हो गया। एक दिन उसने बड़े वज़ीर से कहा— "मैं तुम्हारी बेटी से विवाह करना चाहता हूँ, यह तुम्हारे और तुम्हारी बेटी के लिए बहुत भाग्य की बात है। तुम्हारी बेटी इस राज्य की रानी बन जाएगी और तुम मेरे समधी बन जाओगे इसलिए तुम जल्दी ही इसके लिए कोई अच्छा सा मुहूर्त निश्चित करो ।"

वज़ीर यह सुन कर पल भर के लिए तो चकित रह गया। फिर संभल कर बोला— "हुज़ूर ! आप का कहना सही है, लेकिन मेरी बेटी विदुषी, बुद्धिमती और धार्मिक स्वभाव की है। इसलिए इस विवाह के सम्बन्ध में उससे परामर्श किये बिना मैं अपनी ओर से कोई निर्णय नहीं ले सकता ।"

"अच्छी बात है। उससे सलाह कर लो। मैं समझता हूँ कि यह सुन कर वह अपने भाग्य पर फूली न समायेगी ।" राजा ने घमण्ड के साथ कहा ।

लेकिन वज़ीर के मुँह से राजा की इच्छा सुन कर वह दुखी होकर बोली— "मैं राजा के साथ विवाह नहीं करूँगी पिता जी ! क्यों कि वे अन्तःपुर की अन्य स्त्रियों की तरह मुझे भी गुलाम बना कर रखेंगे। जहाँ कोई स्वेच्छा और स्वतंत्रता नहीं है वहाँ पर रानी का क्या मूल्य होता है ! मैं सिर्फ़ राज्य के वैभव और सुख की चमक देख लालच में आकर रानी बनना नहीं चाहती। कृपया आप राजा से यह बात साफ साफ़ कह दीजिए ।"

वज़ीर ने जब अपनी बेटी का उत्तर राजा को बताया तो वह क्रोधित हो बोला— "यदि वह

(अरब्य रजनी की कहानी)

नहीं चाहती तो मैं ज़बरदस्ती उससे विवाह करूँगा ।''

वज़ीर राजा का विरोध कर उसकी नौकरी नहीं कर सकता था। ''जल में रह कर मगर से बैर'' करना प्राणों से हाथ धोना था। इसलिए उसने बेटी के साथ राज्य से बाहर भाग जाने का निश्चय किया ।

लेकिन दुर्भाग्य से राजधानी से भागते समय वज़ीर भेदियों के द्वारा पकड़ लिये गये और राजा के पास लाये गये। राजा बड़ा ही क्रूर और निर्दयी था। उसने वज़ीर को प्राणदण्ड दे दिया और उसकी बेटी को अपने महल में पहुँचवा दिया ।

फिर उसके पास जाकर क्रोधित हो वह बोला— ''तुमने मेरी इच्छा को ठुकराने का दुस्साहस कैसे किया ? अब देखता हूँ तुम्हारी रक्षा कौन करता है ?''

''जिसकी रक्षा कोई नहीं करता, उसकी रक्षा भगवान करते हैं। जो उसकी मर्जी होगी, वही होगा।'' वज़ीर की बेटी ने साहस पूर्वक जवाब दिया ।

इस घटना के दूसरे ही दिन राजा को अपने गुप्तचरों से यह ख़बर मिली कि राज्य की सीमा पर विद्रोह हो गया है। इसलिए उसने बड़े वज़ीर की बेटी की देखभाल का भार छोटे वज़ीर पर सौंप दी और स्वयं एक बड़ी सेना लेकर विद्रोह को दबाने के लिए सीमा प्रान्त की ओर चला गया ।

बड़े वज़ीर की बेटी अन्तः पुर में एक छोटे से कमरे में बन्दी बना कर रखी गयी थी। छोटा वज़ीर जब उसे देखने के लिए गया तब वह भी उसकी सुन्दरता पर मुग्ध हो गया। उसने अपनी एक विश्वासपात्र दासी को बड़े वज़ीर की बेटी के पास भेजा । उसने वज़ीर की बेटी से जाकर कहा— ''छोटे वज़ीर आप को बहुत चाहते हैं । समीप ही उनका फूलों का एक सुन्दर उद्यान है। क्यों नहीं आप उनके उद्यान में थोड़ी देर के लिए विहार करने चली जातीं ? विश्वास कीजिएगा यह बात किसी को भी मालूम नहीं हो पायेगी ।''

''यह वक्त क्या मेरे लिए विहार करने या खुशी मनाने का है ? अभी-अभी मेरे सामने ही

मेरे पिता की हत्या कर दी गई। मैं यहाँ क़ैद में पड़ी हूँ। मेरे प्राण भी संकट में हैं और तुम इस तरह की बात करती हो ? क्या तुम्हें शर्म नहीं आती ? कह दो अपने मालिक से फिर कभी ऐसी ख़बर मेरे पास न भेजे।" बड़े वज़ीर की बेटी ने दुख और आक्रोश में दासी को डाँट कर भेज दिया।

छोटा वज़ीर दासी की लाई हुई खबर सुन कर डर गया। वह सोचने लगा— "अगर यह खबर राजा तक पहुँच गई तो मुझे भी प्राणदण्ड मिलेगा।"

विद्रोह दबा कर वापस लौटते ही राजा ने छोटे वज़ीर से उस लड़की का हाल पूछा। छोटे वज़ीर ने कुछ सोच कर राजा को झूठी बात बताते हुए कहा— "हुज़ूर ! वह आप की पत्नी बनने योग्य नहीं है। आप के जाने के बाद उसने मेरे पास एक दासी से यह समाचार कहलवा भेजा कि मैं उसके साथ राज्य छोड़कर बाहर चला जाऊँ और उसके साथ विवाह कर सुख पूर्वक रहूँ। किन्तु मैंने उसे डाँट दिया है।"

राजा यह सुन कर बहुत क्रोधित हो उठा और बोला— "तब तो यह बहुत ही दुष्ट और चरित्रहीन स्त्री मालूम होती है। इसका सिर फौरन उड़वा दो अथवा जीवित ज़मीन में दफन करवा दो।"

वज़ीर कुछ कहने ही जा रहा था कि एक बूढ़ा नौकर बोल उठा— "हुज़ूर ! इतनी जल्दबाजी में इसे मारने की कोई जरूरत नहीं है। मेरे ख़्याल में इससे तो अच्छा यह होगा कि इसे रेगिस्तान में छोड़ दिया जाये। ज़िंदगी और मौत का फैसला इस की क़िस्मत खुद कर देगी।"
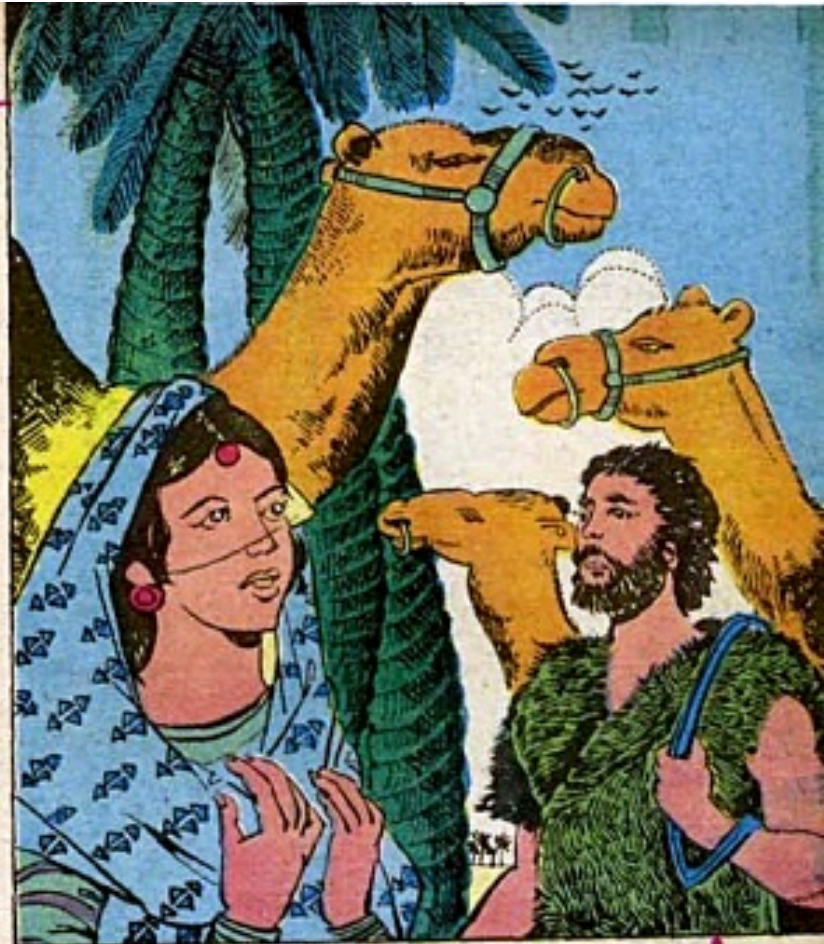
राजा ने बूढ़े नौकर की बात मान ली और उस लड़की को एक ऐसे रेगिस्तान में छोड़ दिया गया जहाँ रेत के टीले, पहाड़ और मैदान ही मैदान थे।

उस बियावान और निर्जन प्रदेश में कोई और सहारा न पाकर लड़की ने आसमान की ओर अपने दोनों हाथ उठा कर भगवान को पुकारा। तभी उस रास्ते से ऊँट पर गुजरते हुए एक मुसाफ़िर ने उसे देख लिया। उसने लड़की को अकेली और असहाय देख कर उससे

कहा— "बेटी यह स्थान तुम्हारे लिए सुरक्षित नहीं है। तुम मेरे साथ मेरे घर चलो। डरने की कोई बात नहीं है।"

"मुझे यहीं मेरे भाग्य पर छोड़ दीजिए। मैं कहीं नहीं जाना चाहती। हाँ, कहीं ऐसी जगह जरूर छोड़ दीजिए जहाँ अपनी प्यास बुझा सकूं।" लड़की ने अनुरोध करते हुए कहा।

मुसाफ़िर ने उसे एक जलाशय के पास ले जाकर छोड़ दिया। वह पास के ही राज्य के युवराज का नौकर था। उसने अपने राज्य में लौट कर युवराज से रेगिस्तान की अकेली सुन्दर लड़की के बारे में बताया। युवराज अपने नौकर के साथ उस लड़की से पास आकर अपना परिचय देते हुए बोला— "आप तो किसी देश की राजकुमारी मालूम पड़ती हैं ? आप इस निर्जन प्रदेश में अकेली कैसे आईं ? आप मेरे नगर में चल कर मेरा आतिथ्य स्वीकार कीजिए। बाद में आप को सुरक्षित अपने स्थान पर पहुँचा दिया जायेगा।"

लेकिन बड़े वज़ीर की लड़की ने युवराज की बात नहीं मानी और उसने वहीं रहने का हठ किया। निराश होकर युवराज वापस चला गया। लेकिन रात भर उसे नींद नहीं आई। वह उस लड़की के बारे में ही सोचता रहा कि वह किस प्रकार उस खतरनाक रेगिस्तान में अकेली होगी। इसलिए दूसरे दिन वह फिर उसके पास आ गया और जलाशय के पास लड़की से कुछ दूर एक पेड़ के नीचे वह भी बैठ गया।

युवराज को पनः आये देख लड़की ने कहा— "आप तो युवराज हैं। आप के ऊपर राज-काज का भार है। इस तरह आप का यहाँ बैठना आप को शोभा नहीं देता। इसलिए अपने राज्य में वापस जाकर राज्य का काम-काज देखिये।"

"लेकिन जब तक आप मेरे साथ नहीं चलेंगी और मेरे साथ विवाह करने का वचन नहीं देंगी तब तक मैं भी यहीं रहूँगा।" युवराज ने उत्तर दिया।

युवराज की सहानुभूति और उसका प्रेम देख लड़की की आँखों में आंसू छलक आये।

"मेरी रक्षा करने में ही मेरे पिता मारे गये।

जिस राजा की, जिन्होंने ज़िन्दगी भर इतने विश्वास के साथ सेवा की, उसने मेरे निर्दोष पिता को क्रूरतापूर्वक मार डाला। मैं जब तक अपने पिता की मौत का बदला नहीं ले लेती, आराम और सुख के बारे में सोच भी नहीं सकती।'' उसने अपनी दुख भरी कहानी सुनाते हुए कहा।

यह सुन कर युवराज तुरन्त अपने नगर में लौट गया और उसने भारी सेना के साथ तबरीस्तान पर हमला कर दिया। युद्ध में वहाँ का राजा हार गया। युवराज राजा और छोटे वज़ीर को बन्दी बना कर अपने नगर में ले आया और लड़की के सामने उन्हें हाज़िर करते हुए बोला— ''ये रहे आप के दुश्मन ! आप जो कहें वही सजा इन्हें दी जायेगी।''

लड़की अपने दुश्मनों को बन्दी देख कर बहुत प्रसन्न हुई। उसने युवराज से उस बूढ़े नौकर को भी हाज़िर करने का अनुरोध किया जिसने इसकी जान बचायी थी। युवराज के सैनिकों ने तुरन्त उस बूढ़े नौकर को भी वहाँ उपस्थित कर दिया।

इसके बाद लड़की ने छोटे वज़ीर को हुक्म दिया कि वह सच-सच बता दे कि राजा के जाने के बाद उसने कैसा व्यवहार किया था। वज़ीर ने सच्ची बात बताते हुए अपनी गलती मान ली। उसने यह भी स्वीकार कर लिया कि उसने राजा से लड़की के बारे में झूठी शिकायत की थी।

वज़ीर का बयान सुनने के बाद लड़की ने फ़ैसले का भार युवराज पर छोड़ दिया। युवराज ने वज़ीर को बीहड़ और निर्जल रेगिस्तान में छोड़ आने के लिए अपने सैनिकों को आदेश दिया।

युवराज के आदेश पर उसके सैनिकों ने राजा का सिर काट डाला।

बूढ़े नौकर को युवराज ने धन और सम्मान के साथ अपने एक सूबे का शासक बना दिया।

अपने पिता की मृत्यु के बाद शोक में डूबी हुई बड़े वज़ीर की बेटी बहुत दिनों के बाद मुस्कुरा उठी। युवराज उसे मुस्कुराते देख बहुत प्रसन्न हुआ और समझ गया कि वह अब ख़ुशी के साथ उसके साथ विवाह करना चाहती है।

फोटो-परिचयोक्ति-प्रतियोगिता :: पुरस्कार ५०)

पुरस्कृत परिचयोक्तियाँ मई १९८४ के अंक में प्रकाशित की जायेंगी।

Pramod Bhanushali

Smt V. Rajamani

★ उपर्युक्त फोटो की सही परिचयोक्तियाँ एक शब्द या छोटे वाक्य में हों। ★ मार्च १० तक परिचयोक्तियाँ प्राप्त होनी चाहिए। ★ अत्युत्तम परिचयोक्ति को (दोनों परिचयोक्तियों को मिलाकर) ५० रु. का पुरस्कार दिया जाएगा। ★ दोनों परिचयोक्तियाँ केवल कार्ड पर लिखकर निम्न पते पर भेजें: **चन्दामामा फोटो-परिचयोक्ति-प्रतियोगिता, मद्रास-२६**

जनवरी के फोटो - परिणाम

प्रथम फोटो : कोई जवाब नहीं!

द्वितीय फोटो : कोई आवाज़ नहीं!!

प्रेषक : गणेश साहा, 21H/13, दत्तोबगान, राजा मनीन्द्र रोड, कलकत्ता-३७

"क्या आप जानते हैं" के उत्तर

१. ईस्ट इंडिया कंपनी के प्रतिनिधि जार चार्नाक सन् १६१० में। २. अकबर। ३. डयोडरन। ४. बर्मा के राजा बोडापाया ने मणिपुर और असम के थोड़े से भूभाग पर अधिकार कर लिया था। ५. राजा राम मोहन राय।

Printed by B. V. REDDI at Prasad Process Private Ltd., and Published by B. VISWANATHA REDDI for CHANDAMAMA CHILDREN'S TRUST FUND (Prop. of Chandamama Publications) 188, . Arcot Road, Madras-600 026 (India). Controlling Editor: NAGI REDDI.

Statement about ownership of CHANDAMAMA (Hindi)
Rule 8 (Form VI), Newspapers (Central) Rules, 1956

1. *Place of Publication*	...	'CHANDAMAMA BUILDINGS' 188, Arcot Road Vadapalani, Madras-600 026.
2. *Periodicity of Publication*	...	MONTHLY
	...	1st of each calendar month
3. *Printer's Name*	...	B.V. REDDI
Nationality	...	INDIAN
Address	...	Prasad Process Private Limited 188, Arcot Road, Vadapalani Madras-600 026.
4. *Publisher's Name*	...	B. VISWANATHA REDDI
Nationality	...	INDIAN
Address	...	Chandamama Publications 188, Arcot Road, Vadapalani Madras-600 026.
5. *Editor's Name*	...	B. NAGI REDDI
Nationality	...	INDIAN
Address	...	'Chandamama Buildings' 188, Arcot Road, Vadapalani Madras-600 026.
6. *Name & Address of individuals who own the paper*	...	'CHANDAMAMA CHILDREN'S TRUST FUND Beneficieries: 1. B.V. NARESH 2. B.V.L. ARATHI 3. B.L. NIRUPAMA 4. B.V. SANJAY 5. B.V. SHARATH 6. B.N. RAJESH 7. B. ARCHANA 8. B.N.V. VISHNU PRASAD 9. B.L. ARADHANA 10. B. NAGI REDDI (JR)

All Minors, by Trustee:
M. UTTAMA REDDI, 14, V.O.C. Street, Madras-600 024

I,B. Viswanatha Reddi, hereby declare that the particulars given above are true to the best of my knowledge and belief.

B. VISWANATHA REDDI
Signature of the Publisher

1st March 1984

पुरस्कार जीतिए

कॅमल

पहला इनाम (१) रु. १५/-
दूसरा इनाम (३) रु. १०/-
तीसरा इनाम (१०) रु. ५/-
१० प्रमाणपत्र
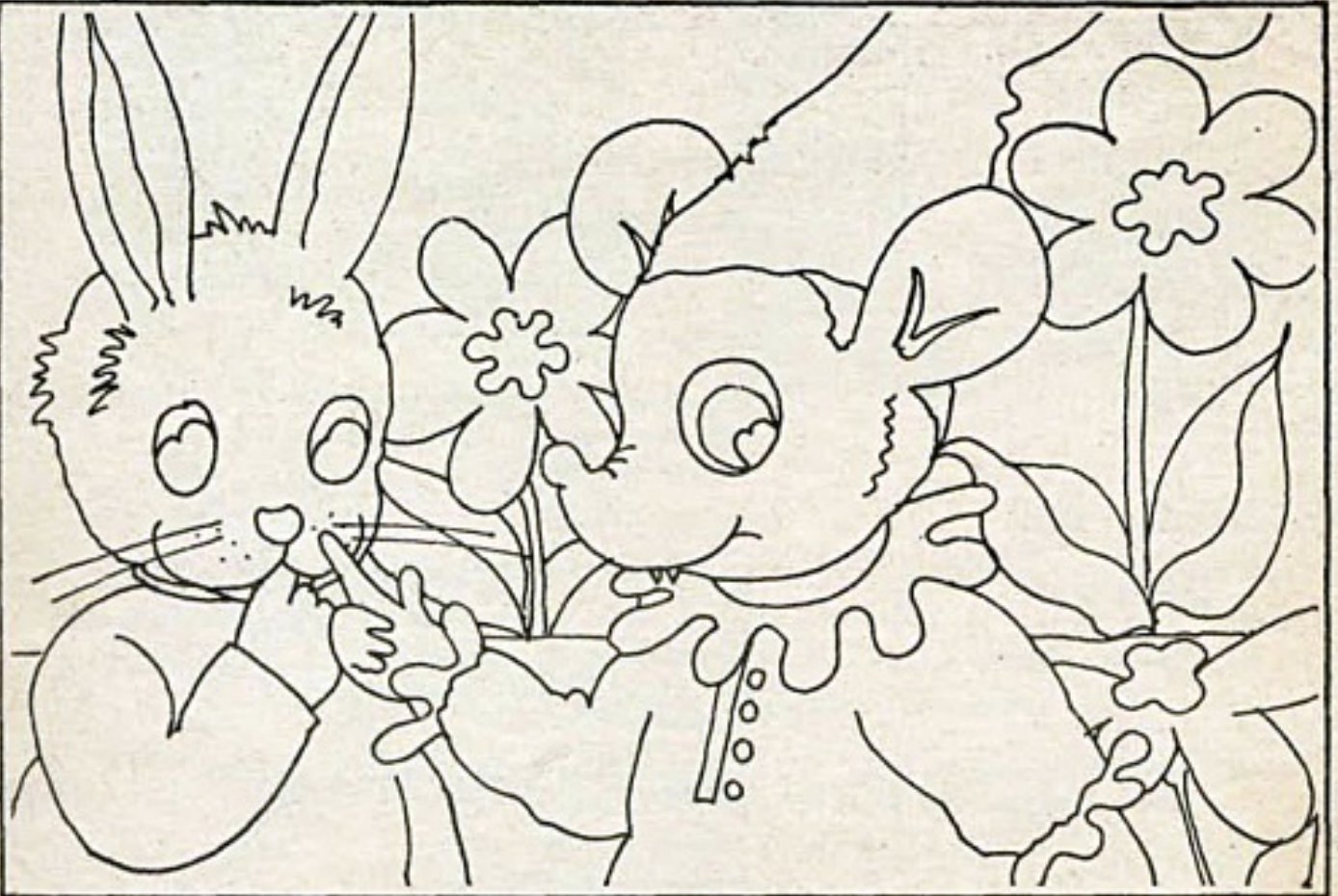
इस प्रतियोगिता में १२ वर्ष की उम्र तक के बच्चे ही भाग ले सकते हैं. ऊपर दिये हुए चित्र में पूरे तौर से कॅमल कलर्स रंग भरिए और उसे निम्नलिखित पते पर भेज दीजिये :

चंदामामा, पो. बॉ. नं. ११५०१, नरिमन पाइंट पोस्ट ऑफ़िस, बम्बई ४०००२१.

जजों का निर्णय अंतिम और सभी के लिए मान्य होगा. इस विषय में कोई पत्र-व्यवहार नहीं किया जायेगा.

कृपया कूपन केवल अंग्रेजी में भरिए.

Name:...Age:..............................

Address:...

....

प्रविष्टियाँ 31–3–1984 से पहले पहले भेजी जायें.

CONTEST NO 35

दोहरा उपहार

* मुफ़्त चन्दामामा

का विशेष परिशिष्ट

* ६ रुपयों की बचत

वार्षिक चंदे पर

CHANDAMAMA

सर्फ़ के इस 1 किलो पैक के साथ

अपने लाड़ले के नए साल की खुशियो में चार चांद लगाइये. उसे 'चन्दामामा' दीजिए. बस. सर्फ़ के इस विशेष १ किलो पैक के ऊपरी फ्लैप पर लगे कूपन को भर कर भेज दीजिए 'चन्दामामा' के प्रकाशकों को। और अगर आप पहली १,००,००० प्रविष्टियों में हैं तो आपको 'चन्दामामा' का विशेष परिशिष्ट मुफ़्त मिलेगा।

और तो और, आपको वार्षिक चंदे पर भी ६ रु. की बचत हो सकती है. इसके लिए आप केवल १८ रु. का पोस्टल ऑर्डर (सामान्य चंदा २४ रु. है) कूपन के साथ में भेज दीजिए.

जल्दी कीजिए! यह उपहार केवल १५ अप्रैल १९८४ तक मिलेगा. यह भेंट केवल चुने हुए शहरों में उपलब्ध है.

सर्फ़ इस भेंट के बिना भी मिलता है.

सर्फ़—हिन्दुस्तान लीवर का एक उत्कृष्ट उत्पादन

LINTAS SU 307 1813 HI